अप्पसत्ती

(आत्म शक्ति)

मंगल आशीर्वाद

परम पूज्य सिद्धान्त चक्रवर्ती राष्ट्रसन्त
श्वेतपिच्छाचार्य श्री 108 विद्यानन्दजी मुनिराज

ग्रंथकार

अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्य श्री 108 वसुनंदी जी मुनिराज

ग्रंथ -
अप्पसत्ती (आत्म शक्ति)

मंगल आशीर्वाद
परम पूज्य सिद्धान्त चक्रवर्ती राष्ट्रसन्त
श्वेतपिच्छाचार्य श्री 108 विद्यानन्दजी मुनिराज

ग्रंथकार
परम पूज्य अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी
आचार्य श्री 108 वसुनंदी जी मुनिराज

सम्पादन - आर्यिका वर्धस्वनंदनी

संस्करण - प्रथम, 2021

प्रतियाँ - 1000

मूल्य - सदुपयोग

ISBN Number : 978-81-951375-1-0

प्राप्ति स्थान
निर्ग्रन्थ ग्रन्थमाला समिति
ई० 102 केशर गार्डन
सै० 48 नोएडा-201301
मो. 9971548889
9867557668

मुद्रण व्यवस्था
अलंकार प्रकाशन
टेली. न. 9310367802

सम्पादकीय

संपूर्ण लोक में विद्यमान जीवादि षट्द्रव्य स्वभाव विभाव रूप से परिणमन करते हुए सतत् प्रवाही नदी के समान प्रवाहमान हैं। लोक में प्रत्येक प्रदेश पर छहों द्रव्यों की संस्थिति है। वे सभी द्रव्य एक प्रदेश पर होते हुए स्व-स्वभाव को नहीं छोड़ते। आचार्य भगवन् श्री कुंदकुंद स्वामी जी ने 'पंचास्तिकाय' में कहा भी है–

अण्णोण्णं पविसंता, देंता ओगासमण्णमण्णस्स।
मेलंता वि य णिच्चं, सग सहावं ण विजहंति॥7॥

वे द्रव्य एक-दूसरे में प्रवेश करते हैं, अन्योन्य को अवकाश देते हैं, परस्पर मिल जाते हैं तथापि सदा अपने-अपने स्वभाव को नहीं छोड़ते। धर्म, अधर्म, आकाश व काल ये चार द्रव्य अनादिकाल से शुद्ध रूप परिणमन कर रहे हैं और अनंतकाल तक शुद्ध रूप परिणमन करते रहेंगे।

सदा अर्थ पर्याय युक्त इन धर्म, अधर्म, आकाश व काल द्रव्य को कोई भी छद्मस्थ पूर्णतया जानने में समर्थ नहीं है। इंद्रिय अगोचर है। जीव व पुद्गल द्रव्य छद्मस्थों के द्वारा भी दृष्टि गोचर व ज्ञानगोचर होते हैं। धर्मादि चार द्रव्य सदा शुद्ध ही रहते हैं, स्वभाव रूप ही परिणमन करते हैं। जीव व पुद्गल द्रव्य शुद्ध व अशुद्ध दोनों होते हैं। जीव शुद्ध होने के पश्चात् कभी अशुद्ध नहीं होता, सदैव स्वभाव रूप परिणमन करता है। किन्तु पुद्गल द्रव्य शुद्ध होने के पश्चात् अशुद्ध हो जाता है।

प्रत्येक द्रव्य में अनेक गुण होते हैं। उन गुणों की अनंत पर्यायें भी होती हैं। अतीत की अनंत पर्यायें, अनागत की अनंत पर्यायें एवं वर्तमान की एक पर्याय। यहाँ प्रस्तुत ग्रंथ में जीव द्रव्य विवक्षित है। आत्मा के गुण, लक्षण, स्वभावों को यहाँ आचार्य भगवन् ने शक्ति के रूप में निबद्ध किया है। इस ग्रंथ में आत्मा की शक्तियों का वर्णन हैं।

आचार्य भगवन् श्री कुंदकुंद स्वामी द्वारा रचित श्री समयसार की 'आत्मख्याति' नामक टीका में आचार्य भगवन् श्री अमृतचंद्र स्वामी ने स्याद्वाद अधिकार के अन्तर्गत आत्मा की 47 शक्तियों का विवेचन किया है। प्रस्तुत ग्रंथ में परम पूज्य अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी, अध्यात्म रसिक आचार्य श्री वसुनंदी जी मुनिराज ने आत्मतत्त्व की 61 शक्तियों का कथन कर आध्यात्मिक चेतना की जागृति हेतु मानो यह अद्भुत उपहार ही मानव जाति को दिया हो।

अनेकान्त, स्याद्वाद यह जैनागम का प्राण है। आचार्य श्री वसुनंदी जी मुनिराज के 'वयण पमाणत्तं' 'अट्ठुंग-जोगो इत्यादि ग्रंथों का अध्ययन कर ज्ञात होता है कि वे प्रमाण, निक्षेप व स्याद्वाद से अलंकृत सिद्धांत के तलस्पर्शी विद्वान् हैं। यूँ तो चारों ही अनुयोगों में मौलिक ग्रंथों की रचनाओं का अध्ययन कर ही ज्ञात होता है कि संपूर्ण जिनागम ही मानो अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी के ज्ञानोपयोग के अंश-अंश में भरित है।

आचार्य श्री ने जिन आत्म शक्तियों को यहाँ लक्षित किया है वे बहुत ही अनुपम हैं। शक्तियों में कुछ शक्तियाँ परस्पर विरुद्ध भी हैं जो अनेकांत से सिद्ध हैं, स्याद्वाद से ही जिनका कथन शक्य है। आचार्य भगवन् श्री अमृतचंद स्वामी ने कहा है-**'अनेकान्तात्मक**

वस्तुनि परस्परविरुद्धशक्तिद्वयप्रकाशनमनेकान्तः' अर्थात् अनेक पार्श्व वाली वस्तु में विद्यमान परस्पर विरुद्ध दो शक्तियाँ को प्रकाशित करना, निरूपित करना अनेकांत है। आत्मा की यें शक्तियाँ स्याद्वाद के माध्यम से वक्तव्य हैं, अतः ग्रंथकार ने स्वयं 'अप्प-सत्ती' ग्रंथ में कहा–

सिआवायेण भासदि, सक्को लहिदुं सव्वगुणसहावं।
सिआवाय-रहिदो जो, विवायं कुव्वदि लोए सो॥6॥

जो स्याद्वाद से कथन करता है वह सर्व गुण स्वभाव को प्राप्त करने में शक्य है, जो स्याद्वाद से रहित है वह लोक में विवाद करता है।

सियावाय-रहारूढ-तवस्सी रयणत्तय-धारगो जो।
अप्पसत्ति-णादू सो, विहिवाहिणिं सक्कदि विजिदुं॥10॥

जो स्याद्वाद रथ पर आरूढ़ है, तपस्वी, रत्नत्रय का धारक और आत्मशक्ति का ज्ञाता है वह कर्म की सेना को जीतने के लिए समर्थ होता है।

अणेगंतदिट्ठीए, अणेगंतरूव-वत्थुतच्चं जो।
पस्सेदि सिआवायं, जाणिय सो होज्ज सण्णाणी॥123॥

जो अनेकांत दृष्टि से अनेकांत रूप वस्तु तत्त्व को देखता है, स्याद्वाद को जानकर वह सम्यग्ज्ञानी होता है।

प्रत्येक तत्त्व, वस्तु अनेकांत धर्म से युक्त होती है। आत्म तत्त्व भी इसी प्रकार अनेकांतात्मक धर्म युक्त है। उसकी शक्तियाँ भी स्याद्वाद द्वारा वक्तव्य हैं, अनेकांत के द्वारा ही उन्हें समझा जा सकता है। जीवत्व, चिति, दृशि, ज्ञान, सुख, वीर्य, प्रभुत्व, विभुत्व, सर्वदर्शित्व, सर्वज्ञत्व, स्वच्छत्व, प्रकाशत्व, असंकुचित-विकाशत्व, अकार्यत्व, अकारणत्व, परिणम्य, परिणामकत्व, त्यागोपादान-शून्यत्व,

अगुरुलघुत्व, उत्पाद-व्यय-ध्रुवत्व, परिणाम, अमूर्तत्त्व, अकर्तृत्व, भोक्तृत्व, निष्क्रियत्व, नियत, स्वधर्मव्यापकत्व, साधारण-असाधारण -साधारणासाधारण, अनंतधर्मत्व, विरुद्धधर्मत्व, तत्त्व, अतत्त्व, एकत्व, अनेकत्व, भाव, अभाव, भावाभाव, अभावभाव, भावभाव, अभावअभाव, भाव, क्रिया, कर्म, कर्तृ, करण, संप्रदान, अपादान, संबंध, अधिकरण, अस्तित्व, नास्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, नित्यत्व, अनित्यत्व, नित्यानित्यत्व, अभेद, भेदत्व, अग्राहकत्व, पारिणामिक इस प्रकार 61 शक्तियाँ आत्म तत्त्व की कही गईं।

आत्मा में अनंत धर्म एक साथ विद्यमान हैं यह भी उस ही की अनंत धर्मत्व शक्ति है एवं परस्पर विरुद्ध धर्मों का सद्भाव है यह उसकी विरुद्ध धर्मत्व शक्ति है। आत्मा की शक्तियों का ज्ञान भेदविज्ञान का कारण भी है। उनका चिंतन भी स्वभाव तक पहुँचाने में समर्थ है।

आचार्य श्री वसुनंदी जी मुनिराज ने ग्रंथ में कहा भी है–

जाणिच्चु अप्पसत्तिं, जीवो अणुभवदि ससुद्ध-सरूवं।
अप्पा रसरूवगंध-फासादो हीणो अमुत्तो॥108॥

आत्मा रस, रूप, गंध व स्पर्श से हीन अमूर्तिक है। जीव आत्मशक्ति को जानकर स्वशुद्ध स्वरूप का अनुभव करता है।

सत्तिणंतपिंडप्पं, जाणिदूणं जदेज्ज भव्वजीवा।
ताण सस्सद-सत्तीण, पगासणाइ भेदणाणेण॥120॥

भव्य जीवों को अनंत शक्ति की पिंड रूप आत्मा को जानकर भेद ज्ञान के द्वारा उनकी शाश्वत शक्तियों के प्रकटीकरण का यत्न करना चाहिए।

138 गाथाओं में निबद्ध **'अप्प-सत्ती'** नामक यह ग्रंथ अध्यात्म का पिंड रूप है। जिस प्रकार सूर्य की रश्मियों का प्रादुर्भाव सूर्य से ही होता है उसी प्रकार आध्यात्मिक पुंज से ही अध्यात्म की रश्मियाँ प्राप्त हो सकती हैं। इस ग्रंथ के अध्ययन के पश्चात् आचार्य भगवन् की आध्यात्मिकता की गहनता का अनुमान विद्वत् जन लगा सकते हैं। सिद्धांत, नय, न्याय, आगम के पारगामी, आध्यात्मिकता का रसास्वादन करने वाले आचार्य श्री वसुनंदी जी मुनिराज वर्तमान में लगभग 40 से अधिक प्राकृत ग्रंथों का लेखन कर चुके हैं एवं तप, संयम-चर्या का पालन करते हुए साधना के शिखर पर विराजमान हैं।

यदि इस ग्रंथ के संपादन में कोई त्रुटि रह गई हो तो विज्ञजन संशोधित कर पढ़ें, हंसवत् गुणग्राही दृष्टि से ग्रंथाध्ययन करें। जन-जन के श्रद्धापुंज परम पूज्य अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्य गुरुवर श्री वसुनंदी जी मुनिराज का संयम, तप, ज्ञान, साधना का सौरभ सहस्रों वर्षों तक संपूर्ण विश्व को सुरभित करता रहे। गुरुवर श्री को आरोग्य लाभ हो एवं अपने लक्ष्य को शीघ्र प्राप्त करें। परमपूज्य गुरुवर श्री के चरणों में सिद्ध-श्रुत-आचार्य भक्ति सहित कोटिशः नमोस्तु! नमोस्तु! नमोस्तु!.....।।

जैनम् जयतु शासनम्
श्री शुभमिति अश्विन शुक्ल एकादशी
श्री वीर निर्वाण संवत् 2547
शनिवार 16/10/2021
श्री सिद्धक्षेत्र तारंगा जी (गुजरात)

आर्यिका वर्धस्वनंदनी

पुरोवाक्

डॉ. श्रेयांसकुमार जैन
अध्यक्ष अखिल भारतवर्षीय
दिगम्बर जैन इनस्त्रि-परिषद्

पुराकाल से ही ऋषियों, मुनियों, आचार्यों ने श्रुताराधना करते हुए ग्रंथों की संरचना की है, उसी परंपरा में वर्तमान के आचार्य विविध विषयों पर प्राकृत संस्कृत, हिंदी भाषा में लेखन कर रहे हैं। प्रकृष्ट क्षयोपशमी आचार्यप्रवर श्री वसुनंदी जी महाराज आगम, अध्यात्म विषयक रचनाओं का सतत सृजन करते हुए श्रुत सम्वर्द्धन कर रहे हैं। इन्होंने शताधिक ग्रंथों का लेखन, सम्पादन, अनुवाद आदि करके जैन साहित्य सम्वर्द्धन में इतिहास रचा है। ये प्राकृत भाषा में अनेक कृतियों का सृजन कर रहें हैं, उनमें **'अप्पसत्ती'** नामक यह रचना अध्यात्म संबंधी रचनाओं में महत्वपूर्ण है। इसमें आत्मा की शक्तियों का विस्तार से विवेचन किया गया है।

पूर्व में अध्यात्मविद्या पारङ्गत दिगम्बर जैन श्रमण परम्परा के स्थायित्व व लोक विश्रुत करने वाले लोकवन्द्य महर्षि कुन्दकुन्द स्वामी ने समयसार, प्रवचनसार आदि ग्रंथों की रचना की। इन ग्रंथराजों पर टीका लिखी, दर्शन और अध्ययन मनीषी आचार्यवर्य श्री अमृत चन्द्रस्वामी ने और समयसार की आत्मख्याति टीका में स्याद्वादाधिकार लिखा, जिसमें आत्मा की 47 शक्तियों की विवेचना की। प्रवचनसार की टीका के अंत में 47 नयों का प्रतिपादन किया। दोनों ग्रंथों में वर्णित आत्मशक्ति या नय वर्णन आत्मा की अन्य सामर्थ्य के घोतक है, उन्हीं

के आश्रय से पूज्यवर श्वेतपिच्छाचार्य श्री विद्यानंद महाराज से विशेष ज्ञानार्जन करने वाले सततविद्याभ्यासी, चारों अनुयोगों के विशिष्ट ज्ञाता आचार्य श्री वसुनंदी जी का लेखन स्याद्वाद अनेकांत की परिधि में ही है। आत्मा की शुद्ध शक्ति की प्राप्ति हेतु ही शुद्धशक्तियों की विवेचना करना अपने आप में अलौकिक है वे स्वयं कह रहे हैं–

सहावं सुद्धगुणा य, सत्ती या पप्पोदुं सगप्पस्स।
अप्पस्स सुद्धसत्ती, वोच्छे हं ओघेणं अत्थ।। अप्पसत्ती –13

स्वात्मा के स्वभाव, शुद्ध गुणों व शक्तियों की प्राप्ति के लिए मैं आचार्य वसुनंदि मुनि ओघ (सामान्य) से यहाँ आत्मा की शुद्धशक्तियों को कहता हूँ। आत्मा की शुद्धशक्तियों में जीवत्वशक्ति की मुख्यता है जिसका स्वरूप बताते हुए आचार्य श्री अमृतचन्द्रस्वामी ने कहा है–**'आत्मद्रव्यहेतुभूतचैतन्य मात्रभावधारणलक्षण जीवत्वशक्तिः'** आत्मद्रव्य के हेतुभूत चैतन्य भाव को धारण करना है लक्षण जिसका वह जीवत्व शक्ति है। इसी के स्वरूप का निरूपण पूज्यवर आचार्य श्रीवसुनंदी जी ने इस प्रकार किया है–

जाइ सत्तीइ जीवो, जीवीअ जीवेदि जीवस्सदे य।
मुणेदव्वा जीवस्स, णिच्चा जीवत्त-सत्ती सा।।अप्पसत्ती –14

जिस शक्ति से जीव जीता था, जीता है व जीवेगा वह जीव की नित्य जीवत्व शक्ति जानना चाहिए। आगे व्यवहार-निश्चयापेक्षा भी प्रतिपादन किया है।

आचार्य अमृतचन्द्रस्वामी ने चैतन्यधारण शक्ति को जीवत्व शक्ति कहा और आचार्य श्री वसुनंदीजी भूत-वर्तमान काल में चैतन्यवान् होने की बात करते हैं अतः शास्त्रीय दृष्टि से जीवत्व शक्ति का स्वरूप

सम्यक् है और आचार्य श्री अमृतचन्द्रस्वामी का ही आश्रय लिये हुए है।

इसी प्रकार चितिशक्ति, दृशिशक्ति, ज्ञानशक्ति, सुखशक्ति, वीर्यशक्ति, प्रभुत्वशक्ति, विभुत्वशक्ति, सर्वदर्शित्वशक्ति, सर्वज्ञत्वशक्ति, स्वच्छत्व शक्ति, प्रकाशशक्ति, असंकुचित्व विकास-त्वशक्ति, अकार्यकारणत्वशक्ति, परिणम्यपरिणामकत्व शक्ति, त्यागोपादानशून्यत्वशक्ति, अगुरुलघुत्व शक्ति, उत्पादव्ययध्रुवत्वशक्ति, परिणामशक्ति, अमूर्तत्वशक्ति, अकर्तृत्वशक्ति, अभोक्तृत्वशक्ति, निष्क्रियत्वशक्ति, नियतप्रदेशत्व शक्ति, स्वधर्मव्यापकत्वशक्ति, साधारणासाधारण शक्ति, अनंतधर्मत्वशक्ति, विरुद्धधर्मत्व शक्ति, तत्त्वशक्ति, अतत्त्वशक्ति, एकत्वशक्ति, अनेकत्वशक्ति, भावशक्ति, अभाव शक्ति, भावाभाव शक्ति, अभाव भावशक्ति, भाव-भाव शक्ति, अभाव अभावशक्ति, भावशक्ति, क्रियाशक्ति, कर्मशक्ति, कर्तृशक्ति, करणशक्ति, संप्रदान शक्ति, अपादानशक्ति, अधिकरणशक्ति, संबंध शक्ति। इन सभी शक्तियों की प्ररूपणा अप्पसत्ती में विस्तार से की गई है। स्वाध्याय करने वालों को इतनी सरल भाषा भाव के साथ आत्मशक्तियों की विवेचना अन्यत्र अनुपलब्ध है।

इन शक्तियों में कुछ परस्पर विरुद्ध शक्तियाँ हैं। विरुद्ध होने पर भी वह अनेकान्त कथन से सत्यसिद्ध होती हैं। वस्तु में एकत्व-अनेकत्व, भाव-अभाव, नित्यत्व-अनित्यत्व उभयधर्मों की सिद्धि अनेकांत सिद्धांत से होती है इसलिए परस्पर विरुद्धशक्ति अविरुद्ध ही मानी जानी चाहिए। आचार्य श्री वसुनंदी जी का लेखन भी अनेकांत की सीमा में होने से परस्पर विरुद्ध प्रतीत होने वाली शक्तियाँ

अविरुद्ध हैं और उनका वर्णन भी अविरुद्ध है। अनेकांत की मर्यादा ये है। भाशक्ति और अभाव शक्ति और उनके सात भंगों का बहुत ही तर्क युक्ति स्याद्वाद के द्वारा विस्तृत विवेचन कृतिकार के द्वारा किया गया है। एकत्वशक्ति, अनेकत्वशक्ति और षट्कारकों द्वारा क्रियाशक्ति, कर्मशक्ति, कर्तृशक्ति आदि की विवेचना में आचार्य अमृतचन्द्र स्वामी के कथन की पुष्टि के साथ खुलासा किया गया है।

इस अप्पसत्ती नामक कृति में आचार्य श्री वसुनंदी जी का भाषा विषयक अधिकार और अर्थ गाम्भीर्य स्पष्ट दिखलायी पड़ता है। इनका ज्ञान चारित्र समन्वित उत्कृष्ट है। जो जैन शासन में ज्ञान का स्वरूप है वही ज्ञान आपमें विद्यमान है। जैनशासन में ज्ञान के विषय में कहा गया है–

जेण तच्चं विबुज्झेज्ज, जेण चित्तं णिरुज्झदि।
जेण अत्ता विसुज्झेज्ज, तं णाणं जिणसासणे।।
जेण रागा विरज्जेज्ज, जेण सेएसु रज्जदि।
जेण मित्ति पभावेज्ज, तं णाणं जिणसासणे।।

अर्थात् जिसके द्वारा तत्वों को जाना जाता है, जिसके द्वारा चित्त का निरोध होता है तात्पर्य है कि मन रूपी मदमस्त हाथी वश में होता है व जिसके द्वारा आत्मा सुविशुद्ध होता है जिनशासन में उसी को ज्ञान कहा गया है। जिसके द्वारा रागादिविकार नष्ट होते हैं जिससे श्रेयोमार्ग में रुचि होती है व जिसके द्वारा जीव मात्र के प्रति मित्रता प्रस्फुटित होती है जैनशासन में उसी को ज्ञान कहा गया है।

आचार्य श्री वसुनंदी जी का ज्ञान जैनशासन में मान्य ज्ञान के अनुरूप होने से इस आत्मशक्ति विवेचन में पदे पदे दृष्टिगोचर होता है।

अप्पसत्ती में सर्वज्ञत्वशक्ति का आगमानुसार ही निरूपण है। कहा है कि जिस शक्ति से आत्मा लोकालोक में वर्तन करने वाले सर्व द्रव्य गुण व पर्यायों को जानता है वह निश्चय से सर्वज्ञत्व शक्ति है।

आचार्य श्री अमृतचन्द्र स्वामी द्वारा वर्णित शक्तियों के विवेचन से अप्पसत्ती में वर्णित आत्मशक्तियों की विशेषता यह है कि इसमें व्यवहार निश्चय नयों के परिप्रेक्ष्य में प्रत्येक शक्ति की विवेचना है जो सहज रूप से पाठकों को प्रतिबोध के लिए उपयोगी है। प्रत्येक शक्ति का वर्णन महत्वपूर्ण है, स्पष्ट है, सम्यक्रूप से शक्ति स्वरूप को स्पष्ट करने वाला है अतः कृति महत्वपूर्ण है। प्राकृत भाषा भी सुबोध और सरल होने से जन ग्राह्य है। लोकोपयोगी कृति की अनुशंसा करता हूँ और स्वाध्यायी तथा विद्वानों से आग्रह करता हूँ कि दुर्गम्य दार्शनिक भाषा में आगम में वर्णित शक्तियों का विवेचन इस अप्पसत्ती में अति सरल भाषा और भावों के साथ प्रस्तुत होने से इसको पढ़कर आत्मशक्तियों का सम्यक् परिज्ञान प्राप्त करें। प्राकृत भाषा में निरंतर रचनाओं का लेखन कर रहे आचार्यप्रवर श्री वसुनंदी जी महाराज को नमोऽस्तु करता हूँ और उनके लेखन की भूरि भूरि प्रशंसा करता हूँ।

आत्मतत्त्व को जानने के लिए अप्पसत्ती एक महान् ग्रंथ

जीवन का लक्ष्य आत्मतत्त्व को पहचानना है। जिसने आत्मतत्त्व को नहीं पहचाना है वह इस संसारसमुद्र में ऐसे ही गोते खाता रहा है। सर्वप्रथम हमें इस बात का ज्ञान परम आवश्यक है कि आत्मतत्त्व में शक्ति कितनी है? आत्मशक्ति की पहचान कैसे करें? आदि विषयों को लेकर ज्ञानदिवाकर, प्राकृतविद्या में निपुण, अभीक्ष्णज्ञानोपयोगी, अनुशासनप्रिय, शिष्य-प्रशिष्यों के मंडल से भूषित आचार्यश्री वसुनंदी मुनि महाराज ने अप्पसत्ती नामक ग्रंथ की रचना प्राकृत भाषा में की है। आचार्यश्री साधु-साध्वी, विद्वत्गण एवं श्रावकों के समक्ष उस ग्रंथ की वाचना करते हैं। यह एक अद्भुत समय होता है, क्योंकि ऐसे समय में ज्ञान-ध्यान और उसकी एकाग्रता समग्र रूप प्राप्त होता है।

अप्पसत्ती में वर्णित विषयवस्तु—आत्मा की शक्तियों के प्रकटीकरण के लिए इस ग्रंथ की रचना की गई है। आज सारा विश्व केवल जड़पदार्थों के प्रकटीकरण के लिए लगा हुआ है। जड़ पदार्थों में नित-नए प्रयोग कर रहा है, परंतु वह भूल रहा है जिस आत्मतत्त्व के कारण वह इन प्रयोगों को कर पा रहा है, उस आत्मतत्त्व की खोज नहीं कर रहा है। अनंत शक्ति वाला यह आत्मद्रव्य है। आचार्यश्री वसुनंदी मुनि महाराज लिखते हैं—

लाए सडदव्वइं, णियमा विज्जंति अणाइयालादु।
पत्तेयदव्वे होंति, बहुपयारा सत्ति-विसिट्ठा॥

अनादिकाल से लोक में छह द्रव्य हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनेक प्रकार

की विशष्टि शक्तियाँ नियम से होती हैं। छह द्रव्य हैं–जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल। जीव बहुत शक्तिशाली है। जीव की शक्ति अनंत है परंतु इस शक्ति को संसारी जीव भूल गया है। इसके स्मरण के लिए आचार्यश्री का यह ग्रंथ अत्यंत उपादेय है।

जीव में वर्णित शक्तियाँ–जीवत्व शक्ति, चितिशक्ति, दृशिशक्ति, ज्ञानशक्ति, सुखशक्ति, वीर्यशक्ति, प्रभुत्वशक्ति, विभुत्वशक्ति, सर्वदर्शित्वशक्ति, सर्वज्ञत्वशक्ति, प्रकाशत्वशक्ति, असंकुचित-विकासत्वशक्ति, अकार्यत्वशक्ति, अकारणत्वशक्ति, परिणम्यशक्ति, परिणामकत्वशक्ति, त्यागोपादान-शून्यत्वशक्ति, अगुरुलघुत्वशक्ति, उत्पादव्ययध्रुत्वशक्ति, परिणामशक्ति, अमूर्तत्व, अकर्तृत्व, भोक्तृत्व, निष्क्रियत्व, नियत प्रदेशत्व, स्वधर्मव्यापकत्व, साधारणासाधारण, अनंतधर्मत्व, विरुद्धधर्मत्व, तत्त्व, अतत्त्व, एकत्व, अनेकत्व, भाव, अभाव, भावाभाव, अभावभाव, भावभाव, अभाव-अभाव, भाव, क्रिया, कर्म, कर्तृ, करण, संप्रदान, अपादान, संबंध, अधिकरण, अस्तित्व, नास्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, नित्यत्व, अनित्यत्व, नित्यानित्यत्व, अभेद, भेदत्व, अग्राहकत्व, पारिणामिक शक्तियाँ जीव में पायी जाती हैं। इनका विस्तार से वर्णन हम ग्रंथ में पढ़ेंगे।

ग्रंथ की उपादेयता–यह ग्रंथ आत्मतत्त्व के संज्ञान के कारण मुमुक्षु के लिए अत्यंत उपादेय है। इस ग्रंथ का स्वाध्याय आत्मतत्त्व के प्रति सजगता उत्पन्न करेगा। आचार्यश्री द्वारा लिखित निम्न गाथा हमें वीतरागता की ओर जाने का संदेश दे रही हैं–

रागी बंधदि कम्मं, सकेदि कम्मक्खयिदुं विरागी।
खयेणुवसमेण विणा, मोहस्स वीयरायत्तं ण॥

रागी कर्मों को बाँधता है और विरागी कर्म क्षय करने में समर्थ होता है। मोह के क्षय वा उपशम के बिना वीतरागता संभव नहीं है।

यह ग्रंथ अत्यंत उपादेय है। इसका पठन और स्वाध्याय आत्मार्थी के लिए आत्मकल्याण का निमित्त बनेगा। हम पूज्य आचार्यश्री के प्रति कृतज्ञ हैं जिनका महान् उपकार है कि ऐसे ग्रंथ का प्रणयन किया है। पूज्यश्री के चरणों में कोटि-कोटि नमोस्तु....

आयतस्तूः

डॉ. आशीष जैन आचार्य, शाहगढ़

(राष्ट्रपति सम्मानित)

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	गाथा सं.	पृष्ठ सं.
1.	मंगलाचरण एवं भूमिका	1-13	01-03
2.	जीवत्व शक्ति	14-16	04
3.	चितिशक्ति	17	04
4.	दृशि शक्ति	18	05
5.	ज्ञान शक्ति	19	05
6.	सुख शक्ति	20	05
7.	वीर्य शक्ति	21-22	05
8.	प्रभुत्व शक्ति	23	06
9.	विभुत्व शक्ति	24-25	06
10.	सर्व दर्शित्व शक्ति	26	07
11.	सर्वज्ञत्व शक्ति	27-29	07
12.	स्वच्छत्व शक्ति	28-29	08
13.	प्रकाशत्व	30	08
14.	असंकुचित-विकाशत्व शक्ति	31-32	09
15.	अकार्यत्व शक्ति	33	09
16.	अकारणत्व शक्ति	34-35	10
17.	परिणम्य शक्ति	36-37	10
18.	परिणामकत्व शक्ति	38-39	11
19.	त्योगापादान-शून्यत्व शक्ति	40-41	11
20.	अगुरुलघुत्व शक्ति	42-43	12
21.	उत्पादव्ययध्रुवत्व शक्ति	44	12
22.	परिणाम शक्ति	45	13
23.	अमूर्तत्व शक्ति	46-47	13
24.	अकर्तृत्व शक्ति	48	14
25.	भोक्तृत्व शक्ति	49-51	14-15
26.	निष्क्रियत्व शक्ति	52-54	15

27.	नियत शक्ति	55-56	16
28.	स्वधर्म व्यापकत्व शक्ति	57-58	16-17
29.	साधारण-असाधारण -साधारणासाधारण शक्ति	59-61	17
30.	अनंतधर्मत्व शक्ति	62	18
31.	विरुद्ध धर्मत्व शक्ति	63-65	18
32.	तत्त्व शक्ति	66	19
33.	अतत्त्व शक्ति	67-69	19-20
34.	एकत्व शक्ति	70	20
35.	अनेकत्व शक्ति	71	20
36.	भाव शक्ति	72	21
37.	अभाव शक्ति	73	21
38.	भावाभाव शक्ति	74	21
39.	अभावभाव शक्ति	75	22
40.	भावभाव शक्ति	76	22
41.	अभावअभाव शक्ति	77	22
42.	भाव शक्ति	78	23
43.	क्रिया शक्ति	79	23
44.	कर्म शक्ति	80	23
45.	कर्तृ शक्ति	81	24
46.	करण शक्ति	82-83	24
47.	संप्रदान शक्ति	84	24
48.	अपादान शक्ति	85-87	25
49.	संबंध शक्ति	88-89	26
50.	अधिकरण शक्ति	90	26
51.	अस्तित्व शक्ति	91	27
52.	नास्तित्व शक्ति	92	27
53.	वस्तुत्व शक्ति	93	27
54.	द्रव्यत्व शक्ति	94	28

55.	प्रमेयत्व शक्ति	95	28
56.	नित्यत्व शक्ति	96	28
57.	अनित्यत्व शक्ति	97	29
58.	नित्यानित्यत्व शक्ति	98	29
59.	अभेद शक्ति	99	29
60.	भेदत्व शक्ति	100	30
61.	अग्राहकत्व शक्ति	101	30
62.	पारिणामिक शक्ति	102	30
63.	आत्मशक्ति ज्ञातव्य	103	31
64.	सम्यग्ज्ञान आवश्यक	104	31
65.	ज्ञान माहात्म्य	105-107	31-32
66.	आत्म स्वरूप	108-109	32
67.	कर्मजेता	110-112	32-33
68.	तत्त्वज्ञानी समर्थ	113	33
69.	नय से तत्त्वचिंतन	114-115	33-34
70.	दुर्नय नाशक-जिनवचन	116	34
71.	वीतरागता कैसे	117	34
72.	चिंतनानुसार कर्मबंध	118	35
73.	भव व शिव मूल	119	35
74.	आत्म शक्ति प्रकटीकरण हेतु यत्न	120	35
75.	सम्यग्ज्ञानी कौन	121	35
76.	भेद विज्ञान फल	122	36
77.	आत्मशक्ति चिंतन हेतु प्रेरणा	123-124	36
78.	पुरुषार्थ से निष्कर्मावस्था	125	36
79.	अनंत शक्ति युत आत्मा	126	37
80.	ग्रंथाध्ययन हेतु	127-128	37
81.	अंतिम मंगलाचरण	129-134	38-39
82.	प्रशस्ति	135-138	40

अप्पसत्ती

(आत्मशक्ति)

मंगलाचरण एवं भूमिका

सव्वावरण-विहीणा, अरिविजेदु-रयपक्खालग-अरिहा।
सुद्धप्पपदेसजुदा, णिरंजणा अणुवमा अचला॥1॥
रायाइ-भावहीणा, पाणाहाराइ-पज्जत्ति-हीणा।
ओदयिगभावरहिदा, परमपारिणामिय-जुत्ता य॥2॥
सव्वसत्तिसंजुत्ता, सव्वसिद्धा साहुणो जिणधम्मं।
वंदित्तु अप्पसत्तिं, वोच्छे पगासणाए ताइ॥3॥

अर्थ–सभी आवरणों से विहीन, कर्म रूपी शत्रुओं के विजेता, सर्व दोष रूपी रज के प्रक्षालक अरिहंतों को एवं शुद्धात्म प्रदेश से युक्त, निरंजन, अनुपम, अचल, रागादि भावों से विहीन, प्राण, आहारादि पर्याप्ति से हीन, औदयिक भाव से रहित, परम पारिणामिक भाव ये युक्त व सर्व शक्तियों से युक्त सभी सिद्धों को, सर्व साधुओं को तथा जिनधर्म को नमस्कार करके 'आत्मशक्ति' नामक ग्रंथ को उसके अर्थात् आत्मा की शक्तियों के प्रकटीकरण के लिए कहता हूँ।

लोए सडदव्वाइं, णियमा विज्जंति अणाइयालादु।
पत्तेयदव्वे होंति, बहुपयारा सत्ति-विसिट्ठा॥4॥

अर्थ–अनादिकाल से लोक में षट्द्रव्य विद्यमान हैं। प्रत्येक द्रव्य में बहुत प्रकार की विशिष्ट शक्तियाँ नियम से होती हैं।

पत्तेय-वत्थुम्मि गुण-दोस-णेगा विज्जंति सहावेण।
णाणी सव्वं णादुं, होदि समत्थो अण्णाणी ण॥5॥

अर्थ—प्रत्येक वस्तु में स्वभाव से अनेक गुण व दोष विद्यमान होते हैं। ज्ञानी सब जानने में समर्थ होता है किन्तु अज्ञानी समर्थ नहीं होता।

सिआवायेण भासदि, सक्को लहिदुं सव्वगुणसहावं।
सिआवाय-रहिदो जो, विवायं कुव्वदि लोए सो॥6॥

अर्थ—जो स्याद्वाद से कथन करता है वह सर्व गुण स्वभाव को प्राप्त करने में शक्य है, जो स्याद्वाद से रहित है वह लोक में विवाद करता है।

सीयलत्त-दायगं च, मलपक्खालगं मलकारग-जलं।
झुणि-विज्जुदुप्पायगं, पहाण-खंडगं विसममियं॥7॥
वियारभाव-हारगं, सहावकारगं विइडि-णासगं च।
दाह-सामगं च अण्ण-जीवाणं जीवण-कारणं॥8॥
णाणावण्णसंजुदं, णाणारसगंधफाससंजुत्तं।
जह जह लहदि णिमित्तं, तह तह हवेदि जल-पविट्टी॥9॥
जलं होदि आहारो, ओसहि-रूवो य रोयकारगं वि।
आजीविका-णिमित्तं, गिहाइ-णिम्माण-कारणं वि॥10॥

अर्थ—जल शीतलतादायक, मलप्रक्षालक, मलकारक, ध्वनि उत्पन्न करने वाला, विद्युतोत्पादक, पाषाण को खंडित करने वाला,

विष, अमृत, विकार भाव परिहारक, स्वभावकारक, विकृतिनाशक, दाहशामक, अन्य जीवों के जीवन का कारण, नाना वर्णों से युक्त नाना रस, गंध, स्पर्श से युक्त होता है। जैसे-जैसे निमित्त प्राप्त करता है वैसे-वैसे जल की प्रवृत्ति होती है। जल आहार, औषधि रूप, रोगकारक, आजीविका निमित्त, गृहादि निर्माण कारक भी होता है।

पयासत्तमुण्हत्तं, दाहगत्तं पाचगत्तं आदी।
बहुगुण-सत्तीओ वा, हवंति वइस्साणरम्मि चिय॥11॥

अर्थ–अग्नि में प्रकाशत्व, ऊष्णत्व, दाहकत्व, पाचकत्व आदि बहुत से गुण व शक्तियाँ होती हैं।

इत्थं सव्वपदत्था, होज्ज संजुत्ता णाणासत्तीहि।
सव्वं जाणिदुं णेव, सक्कदि छउमत्थ-अण्णाणी॥12॥

अर्थ–इस प्रकार सभी पदार्थ नाना शक्ति से युक्त होते हैं। छद्मस्थ अज्ञानी उन सभी को जानने में समर्थ नहीं होता।

सहावं सुद्धगुणा य, सत्ती वा पप्पोदुं सगप्पस्स।
अप्पस्स सुद्धसत्ती, वोच्छे हं ओघेणं अत्थ॥13॥

अर्थ–स्वात्मा के स्वभाव, शुद्ध गुणों व शक्तियों की प्राप्ति के लिए मैं (आचार्य वसुनंदी मुनि) ओघ (सामान्य) से यहाँ आत्मा की शुद्ध शक्तियों को कहता हूँ।

जीवत्व शक्ति

जाइ सत्तीइ जीवो, जीवीअ जीवेदि जीवस्सदे य।
मुणेदव्वा जीवस्स, णिच्चा जीवत्त-सत्ती सा॥14॥

अर्थ–जिस शक्ति से जीव जीता था, जीता है व जीवेगा, वह जीव की नित्य जीवत्व शक्ति जाननी चाहिए।

ववहारेण तियाले, जीवो जीवदि चउव्विह-पाणेहि।
इंदिय-बल-आणपाण-आऊहिं जिणवरुद्दिट्ठो॥15॥

अर्थ–जीव व्यवहार से तीनों कालों में इंद्रिय, बल, श्वासोच्छ्वास, आयु इन चार प्रकार के प्राणों के द्वारा जीता है। ऐसा जिनेंद्र भगवान् के द्वारा कहा गया है।

जीवस्स णिच्छयेणं, होज्ज पाणा णाणं दंसणं च।
णेव णस्संति ते तह, णो पुधो जीवादु तियाले॥16॥

अर्थ–जीव के निश्चय से ज्ञान व दर्शन रूप प्राण होते हैं। वे तीनों कालों में नष्ट नहीं होते तथा जीव से कभी पृथक् नहीं होते।

चितिशक्ति

चिदिसत्तीए जीवो, कयावि होदि अचेयणरूवो णो।
सस्सद-चेयणरूवो, अत्थि आसि होस्सदे तहा हु॥17॥

अर्थ–चितिशक्ति से जीव कभी भी अचेतन रूप नहीं होता। आत्मा शाश्वत चेतनरूप है, था तथा रहेगा।

दृशि शक्ति

जाइ सत्तीइ अप्पा, महासत्तावलोएदुं सक्का।
सा संविदिदव्वा चिय, दिसि-सत्ती सस्सदा णियमा॥18॥

अर्थ–जिस शक्ति से आत्मा महासत्तावलोकन में समर्थ होती है। वह नियम से आत्मा की शाश्वत दृशि शक्ति जाननी चाहिए।

ज्ञान शक्ति

सव्व-पमेयपदत्था, समत्थो पत्तेय-जीवो णादुं।
जाए सत्तीए सा, णाण-सत्ती तस्स णेया हु॥19॥

अर्थ–प्रत्येक जीव सभी प्रमेय पदार्थों को जानने में समर्थ होता है वह उसकी ज्ञानशक्ति जानना चाहिए।

सुख शक्ति

जहवि पत्तेयप्पस्स, सुह-सहावो होदि सुद्धणयेणं।
णिराउलत्त-रूवसुह-सत्ती समयेण जाणेज्जा॥20॥

अर्थ–यद्यपि शुद्धनय से प्रत्येक आत्मा का सुख स्वभाव होता है। आगम से निराकुलत्व रूप सुख शक्ति जाननी चाहिए।

वीर्यशक्ति

पत्तेयं-दव्वे पुध-पुध सत्तीओ हवंति णियमेणं।
अणंतवीरियरूवा, सत्ती जीवस्स सहावेण॥21॥

अर्थ–प्रत्येक द्रव्य में नियम से पृथक्-पृथक् शक्तियाँ होती हैं। जीव की स्वभाव से अनंतवीर्य रूप शक्ति है।

वीरियसत्तीइ विणा, को वि कं वि कज्जं करिदु-मसक्को।
मोक्खं पावेदुं अवि, सा अप्पस्स सस्सद-सत्ती॥22॥

अर्थ–वीर्य शक्ति के बिना कोई भी आत्मा किसी भी कार्य को करने में या मोक्ष प्राप्त करने में भी समर्थ नहीं होता। वह वीर्य शक्ति आत्मा की शाश्वत शक्ति है।

प्रभुत्व शक्ति

अणंतमहिमावंतो अखंडपदावी जाइ सत्तीए।
होदि सातंतसाली, अप्पस्स पहुत्त-सत्ती सा॥23॥

अर्थ–जिस शक्ति से आत्मा अनंत महिमावान्, अखंड प्रतापी, स्वातंत्र्य-शाली होती है वह आत्मा की प्रभुत्व शक्ति है।

विभुत्व शक्ति

सव्वभावेसु वावग-एगभावरूव-विहुत्तसत्ती हु।
अप्पस्स मुणेदव्वा, हं वंदे ताइ लद्धीए॥24॥

अर्थ–सर्व भावों में व्यापक एक भाव रूप आत्मा की विभुत्व शक्ति जाननी चाहिए। मैं उसकी प्राप्ति के लिए उसे नमस्कार करता हूँ।

अप्पम्मि अणंतगुणा, सहावेणं बहुसत्ती विज्जंति।
ता भोत्तुं सक्को सो, अंतरविहवरूव-विहुत्ता॥25॥

अर्थ–आत्मा में स्वभाव से अनंत गुण और बहुत शक्तियाँ विद्यमान होती हैं। वह आत्मा उन सभी को भोगने में समर्थ है। अंतरंग वैभव रूप आत्मा की विभुत्व शक्ति होती है।

सर्वदर्शित्व शक्ति

जाण लोयालोयस्स सत्ता-मेत्त-गाहगरूव-सत्ती।
अप्पस्स सया हु सव्वदंसित्ता जिणिंदसमयेण॥26॥

अर्थ–लोकालोक की सत्ता मात्र ग्राहक रूप शक्ति जिनागम से आत्मा की सदा ही सर्वदर्शित्व शक्ति जाननी चाहिए।

सर्वज्ञत्व शक्ति

दव्वगुणपज्जाया य, सव्वा लोयालोय-वट्टमाणा।
जाइ सत्तीइ जाणदि, सा चिय सव्वण्हुत्त-सत्ती॥27॥

अर्थ–जिस शक्ति से आत्मा लोकालोक में वर्तन करने वाले सर्व द्रव्य, गुण व पर्यायों को जानता है वह निश्चय से उसकी सर्वज्ञत्व शक्ति है।

स्वच्छत्व शक्ति

जह णिम्मल-आयंसे, वा णीरे पडिबिंबंति बिंबाणि।
तह सच्छत्त-सत्तीइ, अप्पस्स सव्वा तस्सिं चिय॥28॥

अर्थ–जैसे निर्मल दर्पण या नीर में बिंब प्रतिबिंबित होते हैं वैसे ही आत्मा की स्वच्छत्व शक्ति से उसमें सर्व द्रव्यादि प्रतिबिंबित होते हैं।

सच्छत्त-सत्तिं विणा, अत्थो ण सक्को बिंबिदुं अप्पे।
पडिबिंबकरण-सत्ती, हवणस्स अत्थेसु अप्पम्मि॥29॥

अर्थ–स्वच्छत्व शक्ति के बिना आत्मा में कोई भी पदार्थ प्रतिबिंबित होने में समर्थ नहीं है। आत्मा में प्रतिबिंब करने की व पदार्थों में प्रतिबिंबित होने की शक्ति है।

प्रकाशत्व शक्ति

दीवोव्व होदि अप्पा, सवरपयासत्त-सत्ति-संजुत्तो।
सयं जाणिदुं अण्णं, जणाविदुं सो चिय समत्थो॥30॥

अर्थ–आत्मा दीपक के समान स्वपर प्रकाशत्व शक्ति से युक्त होती है। वह स्वयं को जानने व अन्यों को जनाने में समर्थ होती है।

असंकुचित-विकाशत्व शक्ति

पुण्णरूवेण सव्वा, गुणा विअसंति सहावणुसारेण।
अप्पस्स हु असंकुइद-विआसत्त-सत्तीए सया॥31॥

अर्थ–आत्मा की असंकुचित विकाशत्व शक्ति से सदा सभी गुण अपने-अपने स्वभाव के अनुसार पूर्ण रूप में विकसित होते हैं।

खेत्तकालादु अणवच्छिण्ण-चेयणविलासरूवा जाण।
असंकुइद-विआसत्त-सत्ती अप्पस्स अणुवमा हु॥32॥

अर्थ–क्षेत्र और काल से अमर्यादित चेतन के विलास स्वरूप आत्मा की अनुपम असंकुचितविकाशत्व शक्ति है।

अकार्यत्व शक्ति

अकज्जत्त-सत्ती खलु, अण्णेण अकरणीयादु अप्पस्स।
अण्णदव्वो अप्पम्मि, असक्को किंचिवि कुव्वेदुं॥33॥

अर्थ–अन्य के द्वारा नहीं करने योग्य होने से आत्मा की अकार्यत्व शक्ति है। अन्य द्रव्य आत्मा में कुछ भी करने में अशक्य है।

अकारणत्व शक्ति

उप्पज्जंते पोग्गल-पज्जाया सया बहुणिमित्तेहिं।
ते अण्णपज्जायाण, होंति कारण-कज्जरूवा हु॥34॥

अर्थ–बहुत निमित्तों से पुद्गल पर्याय सदा उत्पन्न होती हैं। वे ही अन्य पर्यायों के लिए कारण-कार्य रूप होती है।

किण्णु होदि जीवो णो, उप्पत्ति-कारणं अण्णदव्वस्स।
अकारणरूवादो हु, अकारणसत्ति-जुदो अप्पा॥35॥ जुम्मं॥

अर्थ–किन्तु जीव अन्य द्रव्य की उत्पत्ति का कारण नहीं होता। अतः अकारण रूप होने से आत्मा अकारणत्व शक्ति से युक्त है।

परिणम्य शक्ति

सहावरूवा खलु परणिमित्तगणेयागार-गहणस्स य।
होदि परिणम्म-सत्ती, अप्पस्स य सस्सदा णिच्चा॥36॥

अर्थ–परनिमित्तिक ज्ञेयाकारों के ग्रहण करने के स्वभाव रूप आत्मा की शाश्वत व नित्य परिणम्यत्व शक्ति होती है।

परदव्वस्स णाणस्स, विसयादो णिच्चं संविदिदव्वा।
परिणम्म-सत्ती सया, अप्पस्स चिय अणाइणिहणा॥37॥

अर्थ–नित्य परद्रव्य के ज्ञान का विषय होने से आत्मा की निश्चय से सदा अनादिनिधन परिणम्य शक्ति जाननी चाहिए।

परिणामकत्व शक्ति

णादुं परदव्वाणं, गुण-पज्जाया जाए सत्तीए।
अप्पा होदि समत्थो, सा परिणामगत्त-सत्ती हु॥38॥

अर्थ–जिस शक्ति से आत्मा परद्रव्यों के गुणों-पर्यायों को जानने में समर्थ होती है वह उसकी परिणामकत्व शक्ति है।

अप्पणिमित्तगणाणागार-गाहण-सहावरूवा जाण।
परिणामगत्त-सत्ती, अप्पस्स अणाइयालादो॥39॥

अर्थ–आत्म निमित्तक ज्ञानाकारों के ग्रहण कराने के स्वभाव रूप आत्मा की अनादिकाल से परिणामकत्व शक्ति जानो।

त्यागोपादान-शून्यत्व शक्ति

विज्जदि पत्तेयव्वे, चागोवादाण-सुण्णत्त-सत्ती।
अप्पस्स सरूवो खलु, णियदत्तरूवो होदि ताइ॥40॥

अर्थ–प्रत्येक आत्मा में त्यागोपादान शून्यत्व शक्ति विद्यमान है उस शक्ति से आत्मा का स्वरूप निश्चय से नियतत्व रूप होता है।

ण किंचिवि उज्झणीयो, णो किंचिवि गहणीयो अप्पेणं।
अप्पा दु पुण्णरूवो, हवेदि सय ताइ सत्तीए॥41॥

अर्थ–आत्मा के द्वारा कुछ भी त्यागने योग्य नहीं है और कुछ भी ग्रहण करने योगय नहीं है। उस त्यागोपादान शून्य शक्ति से आत्मा सदा पूर्ण रूप ही होता है।

अगुरुलघुत्व शक्ति

सडगुणहाणिविड्ढी हु, होदि अगुरुलहुगुणेणं णियमेण।
पत्तेयदव्वम्मि सय, अप्पम्मि अवि संविदिदव्वा।।42।।

अर्थ–प्रत्येक द्रव्य में नियम से अगुरुलघु गुण से षट्गुण हानि वृद्धि होती है। आत्मा में भी वह जानना चाहिए।

सा सण्णाणिजणेहिं, अप्पस्स चिय अगुरुलहुत्तसत्ती।
अणाइणिहणा णिच्चा, णादव्वा जिणिंदसमयेण।।43।।

अर्थ–वह ही जिनागम से ज्ञानी जनों के द्वारा आत्मा की अनादिनिधन नित्य अगुरुलघुत्व शक्ति जाननी चाहिए।

उत्पादव्ययध्रुवत्व शक्ति

उप्पादव्वयधुवत्त-सत्तीए परिणमंति कमिदरेहि।
सव्वा दव्वा सुद्धा, कमेणं असुद्धा दुविहेण।।44।।

अर्थ–उत्पाद-व्यय ध्रुवत्व शक्ति से सभी द्रव्य क्रम व अक्रम रूप से परिणमन करते हैं। सभी शुद्ध द्रव्य क्रम से तथा अशुद्ध द्रव्य क्रम व अक्रम दोनों प्रकार से परिणमन करते हैं।

परिणाम शक्ति

दव्वस्स सहावभूद-उप्पादव्वय-धुवेहि समण्णिदा।
समविसमरूवा सया, परिणामसत्ती दु अप्पस्स।।45।।

अर्थ–द्रव्य की स्वभावभूत उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य से समन्वित सम-विषम रूप आत्मा की सदा परिणाम शक्ति है।

अमूर्तत्त्व शक्ति

जीवस्स सुद्धसत्ती, अमुत्तरूवा हवेदि णियमेणं।
कम्मबंधादु मुत्तो, ववहारेण णेव सुद्धेण।।46।।

अर्थ–जीव की शुद्ध शक्ति नियम से अमूर्त्त रूप होती है। कर्म बंध होने से व्यवहार से जीव मूर्तिक भी है। शुद्ध नय से कदापि भी मूर्त्त नहीं है।

जाइ सत्तीइ अप्पा, हीणो फास-रस-गंध-वण्णादो।
सस्सदाणाइणिहणा, सा तस्स चिय अमुत्तसत्ती।।47।।

अर्थ–जिस शक्ति से आत्मा स्पर्श, रस, गंध, वर्ण से रहित होती है वह उसकी शाश्वत, अनादिनिधन अमूर्तशक्ति है।

अकर्तृत्व-शक्ति

णेव सुद्धसहावस्स, णेव सहावस्स वि अण्णदव्वाण।
जीवो कत्तू तम्हा, अकत्तत्त-सत्ति-जुद-जीवो।।48।।

अर्थ–जीव शुद्ध स्वभाव का कर्त्ता नहीं है और अन्य द्रव्यों के स्वभाव का भी कर्त्ता नहीं है इसलिए वह अकर्तृत्व शक्ति से युक्त है।

भोक्तृत्व-शक्ति

होंति सव्वदव्वेसुं णियमेणं हु सहज-गुण-पज्जाया।
किण्णु को वि दव्वो णो, तं तं पज्जायं भुंजेदि।।49।।

अर्थ–सर्व द्रव्यों में नियम से सहज गुण पर्याय होती हैं किन्तु कोई भी द्रव्य उन उन पर्याय को नहीं भोगता।

तहेवप्पे भोत्तत्त-सत्ती तस्स भोत्तत्त-अभावादु।
अप्पा णेव भुंजिदुं, समत्थो परमाणुमेक्कं वि।।50।।

अर्थ–उसी प्रकार आत्मा में भोक्तृत्व का अभाव होने से उसकी भोक्तृत्व शक्ति जाननी चाहिए। आत्मा एक परमाणु को भी भोगने में समर्थ नहीं है।

असुद्धजीवम्मि होज्ज, रायदोसाइ-विहावभावा खलु।
सुद्धजीवस्स सत्ती, अभोत्तत्त-रूवा सय तहवि॥51॥

अर्थ–अशुद्ध जीव में रागद्वेषादि विभाव भाव होते हैं। तथापि शुद्ध जीव की सदा अभोक्तृत्व रूप शक्ति जाननी चाहिए।

निष्क्रियत्व शक्ति

धम्मादी चउदव्वा, किरियाहीणा अत्थि अणादीदो।
कम्मविहीणसुद्धस्स, अप्पपदेसाकंवरूवा॥52॥

अर्थ–धर्मादि चार द्रव्य अनादिकाल से क्रियाहीन हैं। कर्म से विहीन शुद्ध जीव की आत्मा के प्रदेश अकंप रूप होते हैं।

पत्तेयजीवे होदि, णिक्किरियत्त-सत्ती सहावेणं।
पोग्गले संजोगे दु, किरियमाणा जीवा हवंति॥53॥

अर्थ–प्रत्येक जीव में स्वभाव से निष्क्रियत्व शक्ति होती है। पुद्गल का संयोग होने पर जीव क्रियमान् होते हैं।

जोगाभावादु होज्ज, अप्पपदेसा कंवरूवरहिदा।
णिक्किरियत्त-सत्तीइ, महापहावो खलु अप्पस्स॥54॥

अर्थ–निष्क्रियत्व शक्ति से आत्मा के प्रदेश योग भाव से होने वाले कंपन से रहित होते हैं। यह निश्चय आत्मा का महाप्रभाव है।

नियत शक्ति

पत्तेय-जीवदव्वे, णियद-पदेसा हवंति णियमेणं।
असंखेज्ज-पदेसा हि, णेव कयावि हीणा अहिया॥55॥

अर्थ–प्रत्येक जीव द्रव्य में नियम से नियत प्रदेश होते हैं। आत्मा के असंख्यात प्रदेश ही होते हैं। कभी भी हीन व अधिक नहीं होते।

पत्तेयप्पे विज्जदि, णिच्चं णियदसत्ती सहावेणं।
ताइ पहावेण णेव, पदेसा हासंति वड्ढंति॥56॥

अर्थ–प्रत्येक आत्मा में स्वभाव से नित्य-नियत शक्ति विद्यमान है। उसके नियत शक्ति प्रभाव से आत्मा के प्रदेश कभी घटते-बढ़ते नहीं हैं।

स्वधर्मव्यापकत्व शक्ति

सधम्मवावगसत्ती, विज्जदे पत्तेयं जीवम्मि सय।
परधम्मागाहगो य, सगधम्मम्मि तह वावगोत्थि॥57॥

अर्थ–प्रत्येक जीव में सदा स्वधर्मव्यापक शक्ति विद्यमान है। जीव पर के धर्म का अग्राहक है अर्थात् पर के धर्म रूप नहीं होता तथा स्वधर्म में व्याप्त होता है।

सव्वदेहेसु वि विज्जमाण-अप्पा णो उज्झदि सधम्मं।
परधम्मं णो गहेदि, सधम्मवावगत्तसत्तीइ॥58॥

अर्थ—स्वधर्मव्यापकत्व शक्ति के द्वारा आत्मा सर्व देहों में विद्यमान होती हुई भी स्वधर्म को नहीं छोड़ती एवं परधर्म को ग्रहण नहीं करती।

साधारण-असाधारण-साधारणासाधारण शक्ति

विज्जंत-सहावा पडिदव्वे फलं साहारण-सत्तीइ।
असाहारणसत्तीइ, मेत्तं अप्पम्मि विज्जंता॥59॥

अर्थ—प्रत्येक द्रव्य में समान रूप से विद्यमान स्वभाव साधारण शक्ति का फल है एवं मात्र आत्मा में विद्यमान स्वभाव असाधारण शक्ति का फल है।

परदव्वावेक्खाए, णाणादी असाहारण-सहावा।
अप्पस्स साहारणा, ते चिय सगदव्ववेक्खाए॥60॥

अर्थ—परद्रव्य की अपेक्षा ज्ञानादि आत्मा के असाधारण स्वभाव हैं। तथा वे ही स्वद्रव्य की अपेक्षा से साधारण स्वभाव हैं।

साहारणसाहारण-मिस्स-सत्ती होदि पत्तेयप्पे।
कयावि णेव विणस्सदि, केण वि कारणेण सत्ती हु॥61॥

अर्थ—प्रत्येक आत्मा में साधारणासाधारण मिश्र शक्ति होती है। वह शक्ति कभी भी किसी भी कारण से नष्ट नहीं होती।

अनंतधर्मत्व शक्ति

विहिण्ण-अणंत-धम्मा गुणा धारदे जाए सत्तीए।
अप्पा णेया तस्स हु, अणंत-धम्मत्त-सत्ती खलु॥62॥

अर्थ—जिस शक्ति से आत्मा विभिन्न अनंत गुण व धर्मों को धारण करती है वह उसकी अनंतधर्मत्व शक्ति जाननी चाहिए।

विरुद्ध धर्मत्व शक्ति

सगसहावेण अप्पा, तदरूवो सय हवेदि णियमेणं।
तदा चिय अतदरूवो, परदव्वसहाववेक्खाए॥63॥

अर्थ—अपने स्वभाव से आत्मा नियम से सदा तद्रूप होती है तथा तब ही परद्रव्य के स्वभाव की अपेक्षा से अतद्रूप होती है।

सगचदुट्ठयादो तद-रूवो होदि अतदरूवो अप्पा।
परचदुट्ठयादु तदा, विरुद्धधम्मत्तसत्ती सा॥64॥

अर्थ—आत्मा स्वचतुष्टय की अपेक्षा तद्रूप और परचतुष्टय की अपेक्षा से अतद्रूप होती है। वह उसकी विरुद्धधर्मत्व शक्ति है।

विरोहि-धम्म-जुदप्पा, परोप्परे होदि पत्तेययाले।
तदातदरूवमयत्त-विरुद्धधम्मत्तसत्ती चिय॥65॥

अर्थ—प्रत्येक काल में आत्मा परस्पर में विरोधी धर्मों से युक्त होती है। तद्रूपमयत्व, अतद्रूपमयत्व विरुद्धधर्मत्व शक्ति है।

तत्त्वशक्ति

को वि दव्वो कया वि ण, चुअदि सगसहावादो सुद्धेणं।
तहेव अप्पा णेया, तच्चसत्तीए जुत्तादो॥66॥

अर्थ–शुद्ध नय से कोई भी द्रव्य कभी भी स्वस्वभाव से च्युत नहीं होता। उसी प्रकार तत्त्वशक्ति से युक्त होने से आत्मा स्वभाव से अच्युत जानना चाहिए।

अतत्त्व शक्ति

परदव्वसहावं णो, गहेदि खलु जीवो हु णेव कयावि।
कयाइ ववहारेणं, णेव कयावि णिच्छयेणं दु॥67॥

अर्थ–जीव कभी भी परद्रव्य के स्वभाव को ग्रहण नहीं करता। कदाचित् व्यवहार से करता भी हो किन्तु निश्चय से कदापि नहीं करता।

जहा धम्माइ-दव्वा, णेव कयावि गहंते परतच्चं।
तहेव अप्पा वि जाण, तस्स खलु अतच्चसत्ती सा॥68॥

अर्थ–जिस प्रकार धर्म आदि द्रव्य कभी भी पर तत्त्व को ग्रहण नहीं करते उसी प्रकार आत्मा भी कभी परतत्त्व को ग्रहण नहीं करता। वह उसकी अतत्त्वशक्ति जाननी चाहिए।

अतच्चसत्तीए खलु, अप्पा अण्ण-सहाव-रूवो णेव।
ससहावं छड्डित्ता, सस्सदं तह अणाइणिहणं॥69॥

अर्थ–अतत्त्वशक्ति से आत्मा अपने शाश्वत, अनादिनिधन स्वभाव को छोड़कर कभी अन्य स्वभाव रूप नहीं होता।

एकत्व शक्ति

अप्पा हु एगरूवो, पहावेणं एगत्तसत्तीए।
णाणापज्जायं अवि, लहिय सहावं विजहदि णेव॥70॥

अर्थ–एकत्त्व शक्ति के प्रभाव से आत्मा एकरूप ही होता है। वह नाना पर्यायों को प्राप्त करके भी स्वभाव को कभी नहीं छोड़ता।

अनेकत्व शक्ति

एग-हवंत-अप्पा वि, सक्को लहिदुं णाणापज्जायं।
अणेगत्तसत्ती सा, ण खयदि कस्स वि कम्मुदयेण॥71॥

अर्थ–आत्मा एक होते हुए भी नाना पर्याय प्राप्त करने में समर्थ है। वह उसकी अनेकत्व शक्ति है। वह किसी भी कर्मोदय से नष्ट नहीं होती।

भावशक्ति

होदि पत्तेयदव्वो, वट्टमाण-पज्जाय-संजुत्तो हु।
भावसत्ती अप्पे वि, सा हु सयायाले खेत्तम्मि॥72॥

अर्थ–प्रत्येक द्रव्य वर्तमान पर्याय से संयुक्त होता है। आत्मा में वह भावशक्ति सदाकाल व सर्वक्षेत्र में विद्यमान होती है।

अभाव शक्ति

वट्टमाण-पज्जायं, विणा अण्णपज्जाओ संभवो ण।
तम्मि याले सा जाण, अभाव-सत्ती खलु अप्पस्स॥73॥

अर्थ–वर्तमान पर्याय के बिना उस काल में अन्य पर्याय संभव नहीं है। वह निश्चय से आत्मा की अभाव शक्ति है।

भावाभाव शक्ति

होज्जा भाविसमयम्मि, वट्टमाणपज्जायस्साभावो।
अप्पस्स भावाभाव-सत्ती सा जाइ सत्तीए॥74॥

अर्थ–जिस शक्ति से भावी समय में वर्तमान पर्याय का अभाव होता है, वह आत्मा की भावाभाव शक्ति जाननी चाहिए।

अभावभाव शक्ति

पुव्वयाले अवट्ठिद-पज्जायस्स उदयरूवा णेया।
अभावभावसत्ती दु, अप्पस्स जिणिंद समयेणं।।75।।

अर्थ–जिन शास्त्र में पूर्व समय में न वर्तती पर्याय के उदय रूप आत्मा की अभाव भाव शक्ति जाननी चाहिए।

भावभावशक्ति

जं पज्जायं होदुं, खमो पज्जायरूवहवणं तस्स।
भावभावसत्ती सा, चिंतेज्जा तं सगहिदत्थं।।76।।

अर्थ–जो पर्याय होने के लिए समर्थ है उसका पर्याय रूप होना , वह आत्मा की भावभाव शक्ति जाननी चाहिए। स्वहितार्थ उसका चिंतन करना चाहिए।

अभावअभाव शक्ति

जं पज्जायं होदुं, णेव सक्को संविदिदव्वा तस्स।
पज्जायरूवहवणं, ण अभावाभावसत्ती सा।।77।।

अर्थ–जो पर्याय होने के लिए शक्य नहीं है उसका पर्याय रूप नहीं होना वह उसकी अभावाभाव शक्ति जाननी चाहिए।

भावशक्ति

कारगाणुगद-किरिया-विहीण-हवणं मेत्तं णादव्वा।
अप्पस्स भावसत्ती, विज्जंता अणाइयालादु॥78॥

अर्थ—कारकों के अनुसार होने वाली क्रिया से विहीन होना मात्र अनादिकाल से विद्यमान आत्मा की भावशक्ति जानना चाहिए।

क्रियाशक्ति

कारगणुगद-परिणमण-रूवा भावमयी अप्पदव्वस्स।
अणुवम-किरियासत्ती, णिद्दिट्ठा चिय गणहरेहिं॥79॥

अर्थ—कारकों के अनुसार परिणमित होने रूप भावमयी, आत्मद्रव्य की अनुपम क्रियाशक्ति गणधरों द्वारा निर्दिष्ट की गई है।

कर्मशक्ति

सिद्धरूव-अइ-णिम्मल-भावा पाविदुं समत्थो अप्पा।
जाए सत्तीए सा, कम्मसत्ती जिणुद्दिट्ठा हु॥80॥

अर्थ—जिस शक्ति से आत्मा सिद्ध रूप अति निर्मल भावों को प्राप्त करने में समर्थ होता है वह जिनेंद्र भगवान् के द्वारा कर्म शक्ति कही गई है।

कर्तृशक्ति

जाइ सत्तीइ अप्पा, सक्कदि कुणिदुं णिम्मलपरिणामं।
जाण कत्तुसत्ती सा, अप्पस्स हु सस्सदा णिच्चा॥81॥

अर्थ–जिस शक्ति से आत्मा निर्मल परिणाम को करने में समर्थ होता है वह आत्मा की शाश्वत नित्य कर्तृशक्ति जाननी चाहिए।

करणशक्ति

अप्पम्मि सिद्धत्तस्स, परिणदीए साहगत्तं णेया।
अप्पस्स करणसत्ती, सुण्णं चिय परसाहणादो॥82॥

अर्थ–आत्मा में सिद्धत्व की परिणति का साधकपना आत्मा की करणशक्ति जाननी चाहिए। वह परसाधन से शून्य है।

करणसत्तीए हु णिय-अप्पे फुरंति णिम्मल-पज्जाया।
सुद्धगुणाण होदि वा, पगासणा अप्पस्स ताए॥83॥

अर्थ–करण शक्ति से निजात्मा में निर्मल पर्यायें प्रकट होती हैं। उससे आत्मा के शुद्ध गुणों का प्रकटीकरण होता है।

संप्रदान शक्ति

जाइ सत्तीइ अप्पा, अप्पस्स दाएज्ज सस्सदगुणा हु।
सा संपढाण-सत्ती, संविढिदव्वा जिणसमयेहि॥84॥

अर्थ–जिस शक्ति से आत्मा, आत्मा के लिए शाश्वत गुणों को प्रदान करती है वह जिनशास्त्रों से संप्रदान शक्ति जाननी चाहिए।

अपादान शक्ति

जेण कारणेण णेव, धुवत्तं खयदि अवादाण-सत्ती।
सा हु अप्पस्स णेया, गुण-धुवा होंति ण पज्जाया॥85॥

अर्थ–जिस कारण से ध्रुवत्व नष्ट नहीं होता है वह आत्मा की अपादान शक्ति जाननी चाहिए। द्रव्य के गुण ही ध्रुव होते हैं, पर्याय नहीं।

अवा-सद्देण चागो, आदाण-सद्देण गाहगो गहदु।
धुवावादाण-हीणो, पज्जायावादाण-जुत्तो॥86॥

अर्थ–'अवा' शब्द से त्याग/अग्रहण व 'आदान' शब्द से ग्राहक/अत्याग ग्रहण करना चाहिए। ध्रुव अपादान से हीन है व पर्याय अपादान से युक्त होती हैं।

उप्पादव्वयसंजुद-धुवभावो विज्जदि सव्वदव्वेसु।
खयंति उप्पादव्वय-जुदपज्जाया णो धुवत्तं॥87॥

अर्थ–सभी द्रव्यों में उत्पाद, व्यय से संयुक्त ध्रुव भाव विद्यमान होता है। उत्पाद व व्यय से युक्त पर्याय नष्ट होती हैं, ध्रुवत्व नहीं।

संबंध शक्ति

छट्ठि-विभत्ती-भिण्णाभिण्णत्थसंबंधरूवा य।
भिण्णवत्थुं भिण्णं च, अभिण्णं ववहारेणं भिण्णं व॥४४॥

अर्थ–षष्ठी विभक्ति भिन्न व अभिन्न पदार्थों के संबंध रूप होती है। भिन्न वस्तु भिन्न व अभिन्न व्यवहार से भिन्न के समान होती है।

ससहावो हि ससामी, ससामित्तरूवसंबंधसत्ती।
अप्पस्स मुणेदव्वा, सस्सदा चिय अणाइणिहणा॥४१॥

अर्थ–स्व स्वभाव ही स्वस्वामी है। आत्मा की स्वस्वामित्व रूप संबंध शक्ति शाश्वत व अनादिनिधन संबंधशक्ति जाननी चाहिए।

अधिकरण शक्ति

जाइ विज्जंति अप्पे, अणंतगुणा अहियरण-सत्ती सा।
गुणी आहाररूवो, गुणा आहेय-रूवा जाण॥४०॥

अर्थ–जिस शक्ति से आत्मा में अनंत गुण विद्यमान होते हैं वह उसकी अधिकरण शक्ति है। गुणी आधार रूप और गुण आधेय रूप जानो।

अस्तित्व शक्ति

पत्तेय-दव्वे होदि, सया अत्थित्त-सत्ती णियमेणं।
तह अप्पम्मि तियाले, सदरूवा अत्थित्तसत्ती॥91॥

अर्थ–प्रत्येक द्रव्य में नियम से सदा अस्तित्व शक्ति होती है। उसी प्रकार आत्मा में तीनों काल में सत्रूप अस्तित्व शक्ति विद्यमान है।

नास्तित्व शक्ति

पत्तेयदव्वे होदि, णत्थित्तसत्ती सय सव्वखेत्ते।
अप्पा वि णत्थिरूवो, परचदुट्ठयावेक्खाए दु॥92॥

अर्थ–प्रत्येक द्रव्य में सदा सर्वक्षेत्र में नास्तित्व शक्ति होती है। परचतुष्टय की अपेक्षा आत्मा नास्तिरूप भी है।

वस्तुत्व शक्ति

सव्वदव्वा हवंते, अत्थकिरियासंजुदा णियमेणं।
अत्थकिरियारूवा य वत्थुत्तसत्ती अप्पम्मि हु॥93॥

अर्थ–सर्वद्रव्य नियम से अर्थ क्रिया से संयुक्त होते हैं। आत्मा में अर्थक्रिया रूप वस्तुत्व शक्ति विद्यमान है।

द्रव्यत्व शक्ति

णेव को वि कूडत्थो, दव्वो णेव पज्जाय-विहीणो दु।
दव्वत्तसत्तीए हु, अप्पे अवि होदि सा सत्ती॥94॥

अर्थ–कोई भी द्रव्य कभी भी कूटस्थ नहीं होता, कभी भी पर्याय से विहीन नहीं होता। आत्मा में भी वह द्रव्यत्व शक्ति होती है।

प्रमेयत्व शक्ति

सव्वा दव्वा हवंति, केवलणाणादिस्स विसयवत्थुं।
तह अप्पे पमेयत्त-सत्ती वि अणाइयालादो॥95॥

अर्थ–सभी द्रव्य केवलज्ञानादि की विषय वस्तु होते हैं। उसी प्रकार आत्मा में भी अनादिकाल से प्रमेयत्व शक्ति विद्यमान है।

नित्यत्व शक्ति

सव्वदव्वेसु विज्जदि, णिच्चत्तं सया गुणावेक्खाए।
ताइ सत्तीइ अप्पा, णिच्चरूवो कयावि खयदि ण॥96॥

अर्थ–सर्वद्रव्यों में गुणों की अपेक्षा से सदा नित्यत्व विद्यमान होता है। उस शक्ति से आत्मा नित्य रूप होती है वह कभी नष्ट नहीं होता।

अनित्यत्व शक्ति

अप्पे अणिच्चभावो, एगपज्जायवेक्खाए होज्जा।
अणिच्चत्तसत्ती सा, भासिदा गणहरदेवेहिं॥97॥

अर्थ–एक पर्याय की अपेक्षा आत्मा में अनित्य भाव होता है वह गणधर देवों के द्वारा अनित्यत्व शक्ति कही गई है।

नित्यानित्यत्व शक्ति

णिच्च-णिच्चत्त-सत्ती, गुणपज्जायुहयावेक्खाए खलु।
अप्पम्मि मुणेदव्वा, सव्वदा अणाइयालादो॥98॥

अर्थ–गुणपर्याय दोनों की अपेक्षा से आत्मा में अनादिकाल से सदा ही नित्यानित्यत्व शक्ति जाननी चाहिए।

अभेद शक्ति

जह धम्मादी दव्वा, अखंडरूवा सव्वदा विज्जंति।
तह अभेयसत्तीए, अप्पा णेव खंडदि कयावि॥99॥

अर्थ–जिस प्रकार धर्मादि द्रव्य सर्वदा अखंडरूप विद्यमान होते हैं। उस प्रकार अभेद शक्ति से आत्मा सदैव अखंड रूप होती है। आत्मा कभी भी खंडित नहीं होती है।

भेदत्व शक्ति

गुणाइ-अवेक्खाए दु, दव्वो भेयरूवो ववहारेण।
तहेव अप्पम्मि वि सा, भेदत्तसत्ती णादव्वा॥100॥

अर्थ–द्रव्य गुणादि की अपेक्षा व्यवहार से भेद रूप है। उसी प्रकार आत्मा में भी वह भेदत्व शक्ति जाननी चाहिए।

अग्राहकत्व शक्ति

सव्वदव्वेसु मिलिय वि, जीवो णो गहदि परदव्वभावं।
सा अप्पस्स हु णेया, अगाहगत्त-सत्ती णिच्चं॥101॥

अर्थ–जीव नित्य सर्वद्रव्यों में मिलकर भी परद्रव्य के भाव को ग्रहण नहीं करता। वह आत्मा की अग्राहकत्व शक्ति जाननी चाहिए।

पारिणामिक शक्ति

जह पत्तेयं दव्वो, पारिणामियभावजुदो होदि सय।
तहेव हु पारिणामिय-सत्ती वि विज्जेदि अप्पम्मि॥102॥

अर्थ–जैसे प्रत्येक द्रव्य सदा पारिणामिक भाव से युक्त होता है उसी प्रकार आत्मा में भी पारिणामिक शक्ति विद्यमान है।

आत्मशक्ति ज्ञातव्य

अप्पसत्तीइ णाणं, विणा लहिदुमसक्को सुद्धरूवं।
जाणित्तु अप्पसत्तिं, सद्धाए हु चिंतेज्जा तं।।103।।

अर्थ–आत्मशक्ति के ज्ञान के बिना शुद्ध स्वरूप को प्राप्त करने में समर्थ नहीं है। अतः आत्मशक्ति को जानकर उसका श्रद्धा से चिंतन करना चाहिए।

सम्यग्ज्ञान आवश्यक

कसायं करेज्ज मंद-मणंतरं पराइदं मिच्छत्तं।
लहेज्ज सद्दंसणं हु, जं सण्णाणी पुणो जीवो।।104।।

अर्थ–जीव को कषायों को मंद करना चाहिए उसके अनंतर मिथ्यात्व को पराजित करना चाहिए पुनः सम्यग्दर्शन को प्राप्त करना चाहिए क्योंकि उसके बाद ही सम्यग्ज्ञानी होता है।

ज्ञान माहात्म्य

सण्णाणेणं हु भेदविण्णाणं तं वेरग्ग-हेदू हु।
संजमतवज्झाणाण, झाणं कम्मक्खयस्स तहा।।105।।

अर्थ–सम्यग्ज्ञान से भेद विज्ञान होता है। वह सम्यग्ज्ञान वैराग्य, संयम, तप, ध्यान का हेतु है तथा ध्यान कर्मक्षय का हेतु है।

सक्कदि रायदोसाइ-मुज्झिदुं जाणंतो अप्पसत्तिं।
जह तह णस्सदे गेहतमं अक्कपयासेण सया॥106॥

अर्थ–जैसे सूर्य के प्रकाश से घर का अंधकार दूर होता है उसी प्रकार सदा आत्मशक्ति को जानता हुआ जीव रागद्वेषादि को छोड़ने में समर्थ होता है।

अप्पचिंतणबलेणं, होदि सुदकेवलि-केवली जीवो।
जह तह अक्कपयासो, होज्जा मेहेसु विघडणेसु॥107॥

अर्थ–जैसे मेघों के विघटित होने पर सूर्य का प्रकाश होता है वैसे ही आत्म चिंतन के बल से जीव श्रुतकेवली व केवली होता है।

आत्म स्वरूप

जाणिच्चु अप्पसत्तिं, जीवो अणुभवदि ससुद्ध-सरूवं।
अप्पा रसरूवगंध-फासादो हीणो अमुत्तो॥108॥

अर्थ–आत्मा रस, रूप, गंध व स्पर्श से हीन अमूर्तिक है। जीव आत्मशक्ति को जानकर स्वशुद्ध स्वरूप का अनुभव करता है।

गइ-आइ-मग्गणादो, जीवसमास-गुणट्ठाण-विहीणो।
पाण-पज्जत्ति-रहिदो, कुभावहीणो हु सुद्धप्पा॥109॥

अर्थ–शुद्धात्मा गति आदि मार्गणा, जीवसमास, गुणस्थान से विहीन है। प्राण व पर्याप्ति से रहित है एवं कुभाव से हीन है।

कर्मजेता

सियावाय-रहारूढ-तवस्सी रयणत्तय-धारगो जो।
अप्पसत्ति-णादू सो, विहिवाहिणिं सक्कदि विजिदुं॥110॥

अर्थ—जो स्याद्वाद रथ पर आरूढ़ है, तपस्वी, रत्नत्रय का धारक और आत्म शक्ति का ज्ञाता है वह कर्म की सेना को जीतने के लिए समर्थ होता है।

सुत्तसीहो ण सक्कदि, लूदाए णिम्मिदेगजालं अवि।
खंडेदुं जागरिओ, गयस्स दंता वि सक्को जह॥111॥
मूलोत्तरकम्मपइडि-खविदुं तच्च-चिंतंतो हु जीवो।
सक्कदि णिच्छयेण तह, णिच्छय-रयणत्तयं धरित्तु॥112॥

अर्थ—जैसे सोता हुआ शेर मकड़ी द्वारा निर्मित एक जाल को भी तोड़ने में समर्थ नहीं होता जबकि जागृत शेर हाथी के दांतों को भी तोड़ने में समर्थ होता है? उसी प्रकार रत्नत्रय को धारण कर तत्त्व चिंतन करता हुआ जीव निश्चय से कर्म की मूल व उत्तर प्रकृतियों को क्षय करने में समर्थ होता है।

तत्त्वज्ञानी समर्थ

तच्चणाणी समत्थो, णादु-मसाहारणसत्ति-मप्पस्स।
वरयो अण्णाणी चिय, अण्णाणेणं भमंति भवे॥113॥

अर्थ—आत्मा की असाधारण शक्ति को जानने में तत्वज्ञानी ही समर्थ है। बेचारे अज्ञानी तो अज्ञान से संसार में भ्रमण करते हैं।

नय से तत्त्वचिंतन

णयेण तच्चचिंतणं, पमाणेणं सुद्धप्पाणुभवोत्ति।
णयेण सुद्धणुभवो ण, तच्चचिंतणं ण पमाणेण॥114॥

अर्थ–नय से तत्त्वचिंतन व प्रमाण से शुद्धात्मानुभव होता है। नय से शुद्धानुभव नहीं होता व प्रमाण से तत्त्वचिंतन नहीं होता।

जह मिट्ठण्ण-वक्खा हु, णयेण संभवो होदि तह लोए।
णो सक्को सविअप्पो, अणुभवो मिट्ठण्ण-सादस्स॥115॥

अर्थ–जैसे लोक में मिष्ठान्न की व्याख्या नय से ही संभव होती है उसी प्रकार मिष्ठान्न के स्वाद का अनुभव सविकल्प संभव नहीं है।

दुर्नयनाशक-जिनवचन

दुण्णय-महातमजुत्त-अणाइणिहण-रत्ती व मण्णेज्जा।
तं णासिदुं समत्थो, पुण्णेणं जिणवयणमिहिरो॥116॥

अर्थ–दुर्नय महा-अंधकार से युक्त अनादिनिधन रात्रि के समान मानने चाहिए। उसे पूर्ण रूप से नष्ट करने में जिनवचन रूपी सूर्य समर्थ है।

वीतरागता कैसे

रागी बंधदि कम्मं, सक्केदि कम्मक्खयिदुं विरागी।
खयेणुवसमेण विणा, मोहस्स वीयरायत्तं ण॥117॥

अर्थ–रागी कर्मों को बांधता है और विरागी कर्म क्षय करने में समर्थ होता है। मोह के क्षय वा उपशम के बिना वीतरागता संभव नहीं है।

चिंतनानुसार कर्मबंध

जह जीवस्स चिंतणं, अणुभागट्ठिदी कम्माण तहेव।
कम्मबंधे अणप्पिद-वयण-काया-तिजोगीणं च॥118॥

अर्थ–जैसा जीव का चिंतन होता है वैसे ही कर्मों की अनुभाग व स्थिति होती है। कर्मबंध में त्रियोगियों के वचन व काय योग गौण होते हैं।

भव व शिव मूल

दुचिंतणं भवमूलो, सिवमूलो सम्मचिंतणं तम्हा।
अप्पहिदत्थं हु सम्म-चिंतणं करिदव्वं भवीहि॥119॥

अर्थ–दुष्चिंतन संसार का मूल है एवं सम्यक् चिंतन मोक्ष का मूल है। इसलिए भव्यों के द्वारा आत्महित के लिए सम्यक् चिंतन किया जाना चाहिए।

आत्म शक्ति प्रकटीकरण हेतु यत्न

सत्तिणंतपिंडप्पं, जाणिदूणं जदेज्ज भव्वजीवा।
ताण सस्सद-सत्तीण, पगासणाइ भेदणाणेण॥120॥

अर्थ—भव्य जीवों को अनंत शक्ति की पिंड रूप आत्मा को जानकर भेद ज्ञान के द्वारा उनकी शाश्वत शक्तियों के प्रकटीकरण का यत्न करना चाहिए।

सम्यग्ज्ञानी कौन

अणेगंतदिट्ठीए, अणेगंतरूव-वत्थुतच्चं जो।
पस्सेदि सिआवायं, जाणिय सो होज्ज सण्णाणी॥121॥

अर्थ—जो अनेकांत दृष्टि से अनेकांत रूप वस्तु तत्त्व को देखता है, स्याद्वाद को जानकर वह सम्यग्ज्ञानी होता है।

भेदविज्ञान फल

सिद्धपदं पावंते, पावीअ पाविस्संति जे जीवा।
भेदविण्णाण-फलं दु, जाणदु तं अण्णहासक्को॥122॥

अर्थ—जो जीव सिद्धपद को प्राप्त कर रहे हैं, प्राप्त किया है व प्राप्त करेंगे, वह भेदविज्ञान का फल जानो। वह सिद्ध पद अन्य प्रकार से प्राप्त करना अशक्य है।

आत्मशक्ति चिंतन हेतु प्रेरणा

जह जोग्गो ण भेसजो, णाणं विणा हु ओसहि-सत्तीए।
जहेच्छलाहं ण लहदि, रक्खंतो बहु-ओसही अवि॥123॥
तह णेव चिंतेज्ज जो, रयणत्तयधारगो अप्पसत्तिं।
कहं सो होज्ज सक्को, सुद्धप्पगुणपगासणाए॥124॥

अर्थ—जैसे औषधि की शक्ति के ज्ञान के बिना योग्य वैद्य बहुत औषधियाँ रखता हुआ भी यथेच्छ लाभ प्राप्त नहीं करता उसी प्रकार जो रत्नत्रय धारक आत्मशक्ति का चिंतन नहीं करता वह शुद्धात्म गुणों को प्रकटीकरण करने में कैसे समर्थ हो सकता है? अर्थात् नहीं हो सकता।

पुरुषार्थ से निष्कर्मावस्था

सकम्मा असुद्धप्पा, कम्मक्खय-सत्तीइ जुदो भव्वो।
सपुरिसट्ठेण सक्कदि, पप्पोदुं णिक्कम्मवत्थं॥125॥

अर्थ—अशुद्ध आत्मा कर्म से युक्त है और कर्मक्षय की शक्ति से भी युक्त है। अपने पुरुषार्थ से भव्य जीव निष्कर्म अवस्था प्राप्त करने में समर्थ होता है।

अनंत शक्ति युत आत्मा

मुत्ताइ सीयलत्तं, खीरे घिदं रयणे दिव्वजोदी।
इक्खुम्मि महुरिमा जह, तह अप्पे अणंतसत्ती हु॥126॥

अर्थ–जिस प्रकार मोती में शीतलता, दूध में घृत, रत्न में दिव्य ज्योति, इक्षु में मधुरता होती है उसी प्रकार आत्मा में अनंत शक्ति होती है।

ग्रंथाध्ययन हेतु

सत्थमिद-अप्पसत्ती, पच्चभिलक्खिदुं सुद्धप्पसत्तिं।
सवरहिदत्थं बुहीहि, पढिदव्वं सया णिट्ठाए॥127॥

अर्थ–शुद्धात्म शक्ति की पहचान के लिए, स्वपरहितार्थ निष्ठा से यह 'आत्मशक्ति' नामक शास्त्र बुधजनों के द्वारा सदा पढ़ा जाना चाहिए।

छउमत्थेहि संभवो, तुडी चुक्केज्ज छलं ण घेत्तव्वं।
संसोहणं करेज्जा, पुच्छिदूणं बहुणाणी चिय॥128॥

अर्थ–छद्मस्थों से त्रुटि संभव है। चूक होने पर छल ग्रहण नहीं करना चाहिए। यदि त्रुटि हो तो बहुज्ञानियों को पूछकर संशोधन करना चाहिए।

अंतिम मंगलाचरण

जुगपुरिस-चरियचक्किं, सूरि-संतिसायरं णमामि जेण।
करिदव्वा इहयाले, भारदे धम्मपहावणा हु॥129॥

अर्थ–जिनके द्वारा इस काल में भारतवर्ष में धर्म प्रभावना की गई उन युगपुरुष, चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज को मैं नमस्कार करता हूँ।

तस्स बहुसिस्सा सूरि-पद-सोहिदा वंदे मुक्खं जेसु।
पायसायरं सूरिं, महातवस्सिं पहावगं च॥130॥

अर्थ–उनके बहुत से शिष्य आचार्य पद से शोभित हुए। जिनमें मुख्य महातपस्वी, प्रभावक आचार्य श्री पायसागर जी की वंदना करता हूँ।

तस्स सिस्स-जयकित्तिं, जस्सणेगसिस्सा दक्खिणे आसि।
अज्झप्पमहारसिगं, णिरालंबझाणिं पणमामि॥131॥

अर्थ–उनके शिष्य आचार्य श्री जयकीर्ति जी को, जिनके अनेक शिष्य दक्षिण में थे उन अध्यात्म योगी, निरालंब ध्यानी को मैं प्रमाण करता हूँ।

परामस्सं गहेज्जा, सीसत्थ-णेदू देसस्स जेणं।
णिरभिस्संगं भारद-गोरव-देसभूसण-सूरिं॥132॥
अज्झप्पजोगिं वरं, तस्स पहाण-सिस्सं णिस्संतं च।
सिदपिच्छिधारगं तह, णीममं णायणीदि-कुसलं॥133॥
जिणसासणुण्णदिकरं, आगमविदुं तह सिद्धंतचक्किं।
सूरिं विज्जाणंदं, अहिवंदे वसुणंदि-सूरी॥134॥

अर्थ—जिनसे देश के शीर्षस्थ नेताओं ने परामर्श लिया उन निःस्पृह भारत गौरव आचार्य श्री देशभूषण जी एवं उनके प्रधान शिष्य उत्कृष्ट अध्यात्म योगी, अतिशय शांत, श्वेतपिच्छिधारक, ममत्व रहित, न्याय नीति में कुशल, जिनशासन की उन्नति करने वाले, आगमविद्, सिद्धांत चक्रवर्ती आचार्य श्री विद्यानंद जी मुनिराज की मैं आचार्य वसुनंदी अभिवंदना करता हूँ।

समत्थो ण तरिदुं हं, जिणागम-सायर-णिस्सीमं जदवि।
तदवि मए लिहिदमिदं, गुरुकिवादिट्ठीइ दुदिणेसु॥135॥

अर्थ—यद्यपि मैं निःसीम जिनागम रूपी सागर को तैरने में समर्थ नहीं हूँ फिर भी गुरु की कृपादृष्टि से यह ग्रंथ मेरे द्वारा दो दिवस में लिखा गया।

प्रशस्ति

तच्च-सरण-वण्ण-गंध-वीरद्धे सावणासिदपणमीइ।
मुणिदिक्खावसरे मम गुरुविज्जाणंदस्स पुण्णो॥136॥

अर्थ–तत्त्व (7) शरण (4) वर्ण (5) गंध (2) 'अंकानां वामतो गतिः' से 2547 वीर निर्वाण संवत् श्रावण कृष्ण पंचमी के दिन, मेरे गुरु आचार्य श्री विद्यानंद जी मुनिराज की मुनि दीक्षा के अवसर पर यह ग्रंथ पूर्ण हुआ।

अप्पा सस्सद-एक्को, होदि सुद्धो रयणत्तयेणं हुं
अध वसुकम्मं णासिय, लहदे वसुगुणं सिद्धाणं॥137॥
अप्पसत्ति-गंथम्मि हु, त-मट्ठतीसुत्तरेगसयगाहा।
सुही सम्मुवदेसं हु, गहेज्ज सुबुद्धीइ अंकेहि॥138॥

अर्थ–आत्मा शाश्वत एक है। वह रत्नत्रय से शुद्ध होती है। पुनः अष्टकर्म का नाशकर सिद्धों के अष्ट गुणों को प्राप्त करती है। इसलिए आत्मशक्ति ग्रंथ में एक सौ अड़तीस (138) गाथा है। सुधीजनों को सुबुद्धि से अंकों के द्वारा दिए गए सम्यक् उपदेश को ग्रहण करना चाहिए।

परम पूज्य अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्य श्री 108

वसुनंदी जी मुनिराज द्वारा

रचित व संपादित साहित्य

मौलिक कृतियाँ

प्राकृत साहित्य

1. प्राकृत वाणी भाग-1, 2, 3
2. अहिंसगाहारो (अहिंसक आहार)
3. अज्ज-सक्किदी (आर्य संस्कृति)
4. अणुवेक्खा-सारो (अनुप्रेक्षा सार)
5. जिणवर-थोत्तं (जिनवर स्तोत्र)
6. जदि-किदि-कम्मं (यति कृतिकर्म)
7. णंदिणंद-सुत्तं (नंदीनंद सूत्र)
8. णिग्गंथ-थुदी (निर्ग्रन्थ स्तुति)
9. तच्चसारो (तत्त्व सार)
10. धम्म-सुत्तं (धर्म सूत्र)
11. रट्ठ-संति-महाजण्णो (राष्ट्र शांति महायज्ञ)
12. सुद्धप्पा (शुद्धात्मा)
13. अप्पणिब्भर भारदो (आत्मनिर्भर भारत)
14. विज्जा-वसु-सावयायारो (विद्या वसु श्रावकाचार)
15. अप्प-विहवो (आत्म वैभव)
16. अट्ठंग जोगो (अष्टांग योग)
17. णमोयार महप्पुरो (णमोकार माहात्म्य)
18. मूल-वण्णो (मूल वर्ण)
19. मंगल-सुत्तं (मंगल सूत्र)
20. विस्स-धम्मो (विश्व धर्म)
21. विस्स-पुज्जो-दियंबरो (विश्व पूज्य दिगम्बर)
22. समवसरण सोहा (समवशरण शोभा)
23. वयण-पमाणत्तं (वचन प्रमाणत्व)
24. अप्पसत्ती (आत्म शक्ति)
25. कला-विण्णाणं (कला विज्ञान)
26. को विवेगी (विवेकी कौन)
27. पुण्णासव-णिलयो (पुण्यास्रव निलय)
28. तित्थयर-णामत्थुदी (तीर्थंकर नाम स्तुति)
29. रयणकंडो (सूक्ति कोश)
30. धम्म-सुत्ति-संगहो (धर्म सूक्ति संग्रह)
31. कम्म-सहावो (कर्म स्वभाव)
32. खवगराय सिरोमणी (क्षपकराज शिरोमणि)
33. सिरि सीयलणाह चरियं (श्री शीतलनाथ चरित्र)
34. अज्झप्प-सुत्ताणि (अध्यात्म सूत्र)
35. समणायारो (श्रमणाचार)

भावार्थ

1. अज्ज-सक्किदी (आर्य संस्कृति)
2. णिग्गंथ-थुदि (निर्ग्रंथ स्तुति)
3. तच्च-सारो (तत्त्वसार)
4. रट्ठसंति-महाजण्णो (राष्ट्रशांति महायज्ञ)
5. णंदिणंद-सुत्तं (नंदीनंद सूत्र)

टीका ग्रंथ

1. प्रमेया टीका-रत्नमाला (संस्कृत)
2. वसुधा टीका-द्रव्यसंग्रह (संस्कृत)
3. नय प्रबोधिनी-आलाप पद्धति (हिंदी)

इंग्लिश साहित्य

Inspirational Tales Part- 1 & 2

वाचना साहित्य

1. मुक्ति का वाग्दान (इष्टोपदेश)
2. बोधि वृक्ष (प्रश्नोत्तर रत्नमालिका)
3. शिवपथ का रथ (सामायिक पाठ)
4. स्वात्मोपलब्धि (समाधि तंत्र)

प्रवचन साहित्य

1. आईना मेरे देश का
2. उत्तम क्षमा धर्म (आत्मा का ए.सी. रूम)
3. उत्तम आर्जव धर्म (रंचक दगा बहुत दु:खदानी)
4. उत्तम मार्दव धर्म (मान महाविष रूप)
5. उत्तम शौच धर्म (लोभ पाप का बाप बखाना)
6. उत्तम सत्य धर्म (सतवादी जग में सुखी)
7. उत्तम संयम धर्म (जिस बिना नहिं जिनराज सीझे)
8. उत्तम तप धर्म (तप चाहे सुरराय)
9. उत्तम त्याग धर्म (निज हाथ दीजे साथ लीजे)
10. उत्तम आकिंचन धर्म (परिग्रह चिंता दु:ख ही मानो)
11. उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म (चेतना का भोग)
12. खुशी के आँसू
13. खोज क्यों रोज-रोज
14. गुरुत्तं भाग 1-15
15. चूको मत
16. जय बजरंगबली
17. जीवन का सहारा
18. ठहरो! ऐसे चलो
19. तैयारी जीत की
20. दशामृत
21. धर्म की महिमा
22. ना मिटना बुरा है न पिटना
23. नारी का धवल पक्ष
24. शायद यही सच है
25. श्रुत निर्झरी
26. सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य की शौर्य गाथा
27. सीप का मोती (महावीर जयंती)
28. स्वाती की बूँद

हिंदी गद्य रचना

1. अन्तर्यात्रा
2. अच्छी बातें
3. आज का निर्णय
4. आ जाओ प्रकृति की गोद में
5. आधुनिक समस्यायें प्रमाणिक समाधान
6. आहारदान
7. एक हजार आठ
8. कलम पट्टी बुद्धिका
9. गागर में सागर
10. गुरु कृपा
11. गुरुवर तेरा साथ
12. जिन सिद्धांत महोदधि
13. डॉक्टरों से मुक्ति
14. दान के अचिन्त्य प्रभाव
15. धर्म बोध संस्कार (भाग 1-4)
16. धर्म संस्कार (भाग 1-2)
17. निज अवलोकन
18. वसु विचार
19. वसुनन्दी उवाच
20. मीठे प्रवचन (भाग 1-6)
21. रोहिणी व्रत कथा
22. स्वप्न विचार
23. सद्गुरु की सीख
24. सफलता के सूत्र
25. सर्वोदयी नैतिक धर्म
26. संस्कारादित्य
27. हमारे आदर्श

हिंदी काव्य रचना

1. अक्षरातीत
2. कल्याणी
3. चैन की जिंदगी
4. ना मैं चुप हूँ ना गाता हूँ
5. मुक्ति दूत के मुक्तक
6. हाइकू
7. हीरों का खजाना

विधान रचना

1. कल्याण मंदिर विधान
2. कलिकुण्ड पार्श्वनाथ विधान
3. चौसठऋद्धि विधान
4. णमोकार महार्चना
5. दु:खों से मुक्ति (बृहद् सहस्रनाम महार्चना)
6. यागमंडल विधान
7. समवशरण महार्चना
8. श्री नंदीश्वर विधान
9. श्री सम्मेदशिखर विधान
10. श्री अजितनाथ विधान
11. श्री संभवनाथ विधान
12. श्री पद्मप्रभ विधान
13. श्री चंद्रप्रभ विधान (देहरा तिजारा)
14. श्री चंद्रप्रभ विधान
15. श्री पुष्पदंत विधान
16. श्री शांतिनाथ विधान
17. श्री मुनिसुव्रतनाथ विधान
18. श्री नेमिनाथ विधान
19. श्री महावीर विधान
20. श्री जम्बूस्वामी विधान
21. श्री भक्तामर विधान
22. श्री सर्वतोभद्र महार्चना

संपादित कृतियाँ (संस्कृत प्राकृत साहित्य

1. आराधना सार (श्रीमदेवसेनाचार्य जी)
2. आराधना समुच्चय (श्री रविचन्द्राचार्य जी)
3. आध्यात्म तरंगिणी (आचार्य सोमदेव सूरी जी)
4. कर्म विपाक (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
5. कर्म प्रकृति (सिद्धांत चक्रवर्ती आ. श्री अभयचंद्र जी)
6. गुणरत्नाकर (रत्नकरण्ड श्रावकाचार) (आ. श्री समंतभद्र स्वामी जी)
7. चार श्रावकाचार संग्रह
8. जिनकल्पि सूत्र (श्री प्रभाचंद्राचार्य जी)
9. जिन श्रमण भारती (संकलन-भक्ति, स्तुति, ग्रंथादि)
10. जिन सहस्रनाम स्त्रोत
11. तत्त्वार्थ सार (श्री मदमृताचन्द्राचार्य सूरि)
12. तत्त्वार्थस्य संसिद्धि
13. तत्त्वार्थ सूत्र (आ. श्री उमास्वामी जी)
14. तत्त्वज्ञान तरंगिणी (श्री मद्भट्टारक ज्ञानभूषण जी)
15. तच्च वियारो सारो (आ. श्री वसुनंदी जी)
16. तत्व भावना (आ. श्री अमितगति जी)
17. धर्म रत्नाकर (श्री जयसेनाचार्य जी)
18. धम्म रसायण (आ. श्री पद्मनंदी स्वामी जी)
19. ध्यान सूत्राणि (श्री माघनंदी सूरी)
20. नीतिसार समुच्चय (आ. श्री इंद्रनंदी स्वामी जी)
21. पंच विंशतिका (आ. श्री पद्मनंदी जी)
22. प्रकृति समुत्कीर्तन (सिद्धांत चक्रवर्ती श्री नेमीचंद्राचार्य जी)
23 पंचरत्न
24. पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय (आ. श्री अमृतचंद्र स्वामी जी)
25. मरणकण्डिका (आ. श्री अमितगति जी)
26. भगवती आराधना (आ. श्री शिवकोटी जी स्वामी)
27. भावत्रयफलप्रदर्शी (आ. श्री कुंथुसागर जी)
28. मूलाचार प्रदीप (आ. श्री सकलकीर्ति स्वामी जी)
29. योगामृत (भाग 1-2) (मुनि श्रीबालचंद्र जी)
30. योगसार (भाग 1, 2) (मुनि श्री बालचंद्र जी)
31. रयणसार (आ. श्री कुंदकुंद स्वामी)
32. वसुऋद्धि
    - रत्नमाला (आ. श्री शिवकोटि स्वामी जी)
    - पूज्यपाद श्रावकाचार (आ. श्री पूज्यपाद जी)
    - लघु द्रव्य संग्रह (आ. श्री नेमीचंद्र स्वामी जी)
    - अर्हत प्रवचनम् (आ. श्री प्रभाचंद्र स्वामी जी)
    - स्वरूप संबोधन (आ. श्री अकलंक देव जी)
    - इष्टोपदेश (आ. श्री पूज्यपाद स्वामी जी)
    - वैराग्यमणि माला (आ. श्री विशाल कीर्ति जी)
    - ज्ञानांकुश (आ. श्री योगीन्द्र देव)
33. सुभाषित रत्न संदोह (आ. श्री अमितगति स्वामी जी)
34. सिन्दूर प्रकरण (आ. श्री सोमदेव स्वामी जी)
35. समाधि तंत्र (आ. श्री पूज्यपाद स्वामी जी)
36. समाधि सार (आ. श्री समंतभद्र स्वामी जी)
37. सार समुच्चय (आ. श्री कुलभद्र स्वामी जी)
38. विषापहार स्तोत्र (महाकवि धनंजय जी)

प्रथमानुयोग साहित्य

1. अमरसेन चरित्र (कविवर माणिक्कराज जी)
2. आराधना कथा कोष (ब्र. श्री नेमीदत्त जी) (भाग 1-2-3)
3. करकण्डु चरित्र (मुनि श्री कनकामर जी)
4. कोटिभट श्रीपाल चरित्र (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
5. गौतम स्वामी चारित्र (मण्डलाचार्य श्री धर्मचंद्र जी)
6. चारूदत्त चरित्र (ब्र. श्री नेमीदत्त जी)
7. चित्रसेन पद्मावती चरित्र (पं. पूर्णमल्ल जी)
8. चेलना चारित्र
9. चंद्रप्रभ चरित्र
10. चौबीसी पुराण
11. जिनदत्त चरित्र (कविवर ब्रह्मराय)
12. त्रिवेणी (संग्रह ग्रंथ)
13. देशभूषण कुलभूषण चरित्र
14. धर्मामृत (भाग 1-2) (श्री नयसेनाचार्य जी)
15. धन्यकुमार चरित्र (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
16. नागकुमार चरित्र (आ. श्री मल्लिषेण जी)
17. नंगानंग कुमार चरित्र (श्रीमान् देवदत्त)
18. प्रभंजन चरित्र (कविवर ब्रह्मराय)
19. पाण्डव पुराण (श्री मदाचार्य शुभचंद्र देव)
20. पार्श्वनाथ पुराण (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
21. पुण्याश्रव कथा कोष (भाग 1-2) (श्री रामचंद्र मुमुक्षु)
22. पुराण सार संग्रह (भाग 1-2) (आ. श्री दामनंदी जी)
23. भरतेश वैभव (कवि रत्नाकर)
24. भद्रबाहु चरित्र
25. मल्लिनाथ पुराण (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
26. महीपाल चरित्र (कविवर श्री चारित्र भूषण)
27. महापुराण (भाग 1-2)
28. महावीर पुराण (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
29. मौनव्रत कथा (आ. श्री श्रीचंद्र स्वामी जी)
30. यशोधर चरित्र
31. रामचरित्र (भाग 1-2) (आ. श्री सोमदेव स्वामी)
32. रोहिणी व्रत कथा
33. व्रत कथा संग्रह
34. वरांग चरित्र (आ. श्री जटासिंह नंदी)
35. विमलनाथ पुराण (श्री ब्रह्मचारीश्वर कृष्णदास जी)
36. वीर वर्धमान चरित्र
37. श्रेणिक चरित्र
38. श्रीपाल चरित्र (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
39. श्री जम्बूस्वामी जी चरित्र (श्री वीर कवि)
40. शांतिनाथ पुराण (भाग 1-2) (कवि असग जी)
41. सप्तव्यसन चरित्र (आ. श्री सोमकीर्ति भट्टारक)
42. सम्यक्त्व कौमुदी
43. सती मनोरमा
44. सीता चरित्र (श्री दयाचंद गोलीय)
45. सुरसुंदरी चरित्र
46. सुलोचना चरित्र
47. सुकुमाल चरित्र
48. सुशीला उपन्यास
49. सुदर्शन चरित्र (पं. गोपालदास बैरया)
50. सुभौम चरित्र
51. हनुमान चरित्र
52. क्षत्र चूड़ामणि (जीवंधर चरित्र)

संपादित हिंदी साहित्य

1. अरिष्ट निवारक त्रय विधान
   - नवग्रह विधान
   - वास्तु निवारण
   - मृत्युंजय (पं. आशाधर जी कृत)
2. श्री जिनसहस्त्रनाम एवं पंचपरमेष्ठी विधान
3. श्री जिनसहस्त्रानाम विधान (लघु) आदि एक नाम अनेक
4. शाश्वत शांतिनाथ ऋद्धि विधान
   - भक्तामर विधान (आ. मानतुंग स्वामी जी (मूल))
   - शांतिनाथ विधान (पं. ताराचंद्र जी)
   - सम्मेदशिखर विधान (पं. जवाहर दास जी)
5. कुरल काव्य (संत तिरुवल्लुवर)
6. तत्त्वोपदेश (छहढ़ाला) (पुं. प्रवर दौलतराम जी)
7. दिव्य लक्ष्य (संकलन-हिंदी पाठ, स्तुति आदि)
8. धर्म प्रश्नोत्तर (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
9. प्रश्नोत्तर श्रावकाचार (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
10. भक्तिसागर (चौबीसी चालीसा संग्रह)
11. विद्यानंद उवाच (आ. श्री विद्यानंद जी मुनिराज)
12. सुख का सागर (चौबीसी चालीसा)
13. संसार का अंत
14. स्वास्थ्य बोधामृत

गुरु पद विनयांजली साहित्य

1. अक्षर शिल्पी (मुनि शिवानंद)
2. पगवंदन (मुनि शिवानंद प्रशमानंद)
3. वसुनंदी प्रश्नोत्तरी (मुनि जिनानंद, ऐ. विज्ञान सागर)
4. दृष्टि दृश्यों के पार (आ. श्री वर्धस्वनंदनी, वर्चस्वनंदनी)
5. स्मृति पटल से भाग 1-2 (आ. श्री वर्धस्वनंदनी)
6. अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी (ऐलक विज्ञान सागर)
7. गुरु आस्था (ऐलक विज्ञान सागर)
8. परिचय के गवाक्ष में (ऐलक विज्ञान सागर)
9. स्वर्णोदय (ऐलक विज्ञान सागर)
10. स्वर्ण जन्मजयंती महोत्सव (ऐलक विज्ञान सागर)
11. हस्ताक्षर (ऐलक विज्ञान सागर)
12. वसु सुबंध (महाकाव्य) (प्रो. डॉ. उदयचंद्र जी जैन)
13. समझाया रविन्दु न माना (सचिन जैन 'निकुंज')